

खंड III दक्षिण भारत में इतिहास लेखन

समय रेखा

संगम (तमिल) साहित्यिक परम्परा

तोलकाप्पियम

पतुपट्टु

मदुरैकाँची

तेलुगु साहित्यिक परम्परा

आमुक्तमाल्यद

रायवाचकमु



इलंगो अडिगल/आदिगल, पुम्पुहार (पुहार)

सामार: Creative Commons Attribution-Share Alike 3.0 Unported

लेखक: कासीअरुणाचलम्, फरवरी, 2008

स्रोत: <https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/2/23/Puhar-ILango.jpg>

इकाई 7 संगम साहित्यिक परम्परा*

इकाई की रूपरेखा

- 7.0 उद्देश्य
- 7.1 प्रस्तावना
- 7.2 संगम साहित्य: परिचय
- 7.3 संगम साहित्य में ऐतिहासिक चेतना तथा ऐतिहासिक परम्परा
 - 7.3.1 अतीत का वर्णन
 - 7.3.2 ऐतिहासिक विवरण
- 7.4 रचना तथा संहिताकरण: इतिहास का निर्माण
- 7.5 अतीत का प्रमाणीकरण: संगम युग की ऐतिहासिकता
- 7.6 ऐतिहासिक परम्पराओं में निहित विरासत
- 7.7 सारांश
- 7.8 शब्दावली
- 7.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
- 7.10 संदर्भ ग्रंथ
- 7.11 शैक्षणिक वीडियो

7.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप समझ पाएँगे कि :

- संगम शास्त्रीय काव्य को किस तरह व्यवस्थित किया गया है,
- विभिन्न ग्रंथों का कालानुक्रम,
- संगम काव्य के माध्यम से किस प्रकार की ऐतिहासिक चेतना प्रकट होती है, और
- उन महत्वपूर्ण ऐतिहासिक विवरणों को जिनका संगम काव्य में वर्णन है।

7.1 प्रस्तावना

अतीत के अध्ययन के लिए साहित्य बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है क्योंकि एक संकीर्ण अर्थ में यह इतिहास की शुरुआत का संकेत करता है। आरम्भिक ऐतिहासिक काल में तमिल क्षेत्र, जिसमें आज के तमिलनाडु तथा केरल शामिल हैं, का इतिहास संगम साहित्य के नाम से विख्यात साहित्यिक स्रोतों, अभिलेखीय स्रोतों तथा पुरातत्व के माध्यम से पुनर्निर्मित किया जा सकता है। इस इकाई में हम साहित्यिक स्रोतों पर मुख्य रूप से अपना ध्यान केंद्रित करेंगे। यह इकाई न केवल संगम साहित्य में प्रतिबिम्बित होने वाले इतिहास के पुनर्निर्माण पर विचार करती है बल्कि इन कवियों की अतीत-संबंधी अवधारणाओं और ऐतिहासिक चेतना तथा इनके द्वारा प्रशंसित शासकों की वैधता पर भी दृष्टि डालती है। यह इकाई संगम काल, जिसे शास्त्रीय (classical) युग भी कहा जाता है, में संगम काव्य में निहित ऐतिहासिक चेतना का विश्लेषण करती है।

7.2 संगम साहित्य: परिचय

संगम साहित्य से अभिप्राय उस आरम्भिक तमिल साहित्यिक रचनाओं के भंडार से है जिनका हस्तांतरण मौखिक परम्परा के रूप में हुआ तथा जिन्हें सामान्य युग की प्रारम्भिक शताब्दियों में

* डॉ. एस. बी. दर्शना, पी. जी. एंड रिसर्च डिपार्टमेंट ऑफ हिस्ट्री, होली क्रॉस कॉलेज, तिरुचिरापल्ली, तमिलनाडु

तिथिबद्ध किया गया। 'संगम' (या विद्वत-सभा) शब्द सर्वप्रथम मध्यकालीन ग्रंथों में पाया जाता है तथा उन तमिल रचनाओं का संकेत करता है जिनको इन विद्वत-सभाओं में संकलित किया गया था। नक्कीरनार, जिसने इरैयनार अकप्पोरुल (आठवीं शताब्दी सी ई का एक ग्रंथ) पर भाष्य लिखा था, के अनुसार तीन संगम अस्तित्व में थे। सभी संगमों (कवियों की परिषदों) को पांड्य शासकों का संरक्षण प्राप्त था। प्रथम संगम का आयोजन तेन/तेण मदुरै (तेन/तेण का अर्थ दक्षिण से हैं) में हुआ था जो बाद में समुद्र में समा गया था। इस परिषद् में 4449 कवियों ने भाग लिया और यह 4440 वर्षों तक अस्तित्व में रही। इन कवियों के नामों की सूची में भगवान शिव, भगवान मुरुगा/मुरुगन, भगवान कुबेर तथा ऋषि अगस्त्य शामिल हैं। द्वितीय संगम का आयोजन कपाटपुरम में हुआ जो 3700 कवियों के साथ 3700 वर्षों तक अस्तित्व में रहा। दंतकथाओं के अनुसार तेन मदुरै और कपाटपुरम, दोनों, समुद्र में समा गए थे। इन दोनों संगमों में रचे गए ग्रंथ समय की मार से सुरक्षित नहीं बच पाए।

तृतीय संगम 1830 वर्षों तक अस्तित्व में रहा तथा इसे 49 पांड्य राजाओं का संरक्षण प्राप्त था। वर्तमान में उपलब्ध ग्रंथ तृतीय संगम से संबंध रखते हैं जिनमें *तोलकाप्पियम* (तमिल व्याकरण की प्राचीन कृति), *एट्टुत्तुकाई* (*Ettuttokai*) (अष्ट-संग्रह – आठ साहित्यिक रचनाओं का एक संकलन जिसमें *नटरिणै*, *कुरुंतोकाई*, *ईकुरुनुरु*, *पथित्रुपाथु/पथित्रुपथु*, *परिपादल*, *कलिट्टोकाई/कालिट्टोकाई*, *अकनानुरु* तथा *पुरनानुरु* शामिल हैं), और *पत्तुपट्टु* (दस दीर्घ कविताएँ जिनमें तिरुमुरुगात्रुप्पदै [*Tirumurugatrappadai*], *सिरुपानात्रुप्पदै*, *पेरुम्पानात्रुप्पदै*, *मुल्लईपट्टु*, *मदुरैकांची*, *नेदुनलवादई* [*Nedunalvadai*], *कुरिंजीपातु*, *पट्टिनापालै* तथा *मलैपादुकादम* [*Malaipadukadam*] शामिल हैं) समाविष्ट हैं।

कवियों की ऐसी सभा का 9000 वर्षों के लिए अस्तित्व में रहना, जिस तरह इसे बाद के ग्रंथों में बताया गया है, वास्तविक सम्भावना से परे है। यद्यपि तीन संगमों के संबंध में यह परम्परा बाद के समय की परिघटना है, इस साहित्य को सुदूर अतीत में स्थापित करना इस साहित्य परम्परा के महत्व में वृद्धि करने तथा तत्कालीन राजनीतिक-सामाजिक परिवेश में इसके महत्व को स्थापित करने का एक तरीका है। संगम कविताओं को चारणों और कवियों के यथार्थ भावों के साथ प्रकट माना जाता है जिनमें कुछ यथार्थ है तो अतिशयोक्ति का कुछ अंश भी है।

मूल रूप से ये कविताएँ मौखिक परम्परा के रूप में हस्तांतरित होती रहीं तथा इन्हें बाद के काल में संहिताबद्ध किया गया। इस विपुल भंडार की विभिन्न कृतियों का कालक्रम तय करना मुश्किल कार्य है। कविताओं की रचना तथा मौखिक परम्परा की शुरुआत सम्भवतः तीसरी शताब्दी बी सी ई में हुई थी। इस मौखिक साहित्य का संकलनों के रूप में संशोधन तथा संहिताकरण लगभग आठवीं शताब्दी सी ई में हुआ था। इस परिषद् को एक निश्चित तिथि में स्थापित करना कठिन है क्योंकि विभिन्न कृतियाँ अलग-अलग समयों से संबंध रखती हैं।

इन गीतों की विषयवस्तु को दो मुख्य शैलियों में श्रेणीबद्ध किया जा सकता है – *अकम* तथा *पुरम*। *अकम*-काव्य लोगों के आंतरिक जीवन से संबंध रखता है, जैसे प्रेम-प्रसंग तथा विवाह, जबकि *पुरम* का संबंध बाह्य जीवन से है, जैसे युद्ध। संगम साहित्य में उल्लिखित *तिणै* (*tinai*) की संकल्पना दोनों ही शैलियों के काव्य से संबंध रखती है।

संगम साहित्य में *तिणै* की संकल्पना भू-दृश्य के साथ-साथ प्रसंगानुरूप प्रेम तथा युद्ध की स्थितियों का संकेत करती है। *अकम*-काव्य में इन्हें पाँच प्रकार के भू-दृश्यों में बाँटा गया है जहाँ नायक तथा नायिका के आंतरिक जीवन की पाँच चरणों में चर्चा की गई है। *कुरिंजी* पर्वतीय *तिणै* या भू-दृश्य है जो प्रेमियों के मिलन से संबंधित है; *मुल्लै* या चरागाह क्षेत्र का संबंध अपने प्रेमी के लिए प्रतीक्षारत स्त्री के बिम्ब से है; *मरुतम* या नदी-द्रोणी का क्षेत्र नायक के विश्वासघात से संबंधित है, *नेयतल* या तटीय क्षेत्र विरह तथा विकलता से संबंधित है; *पालै* या शुष्क भू-क्षेत्र कई कठिनाइयों और प्रेमियों के वियोग को प्रकट करता है। इन पारिस्थितिकीय-क्षेत्रों के अपने विशिष्ट जीव, वनस्पतियाँ, समय, देवता, व्यवसाय तथा मौसम हैं। किसी विशिष्ट पारिस्थितिकीय क्षेत्र (*तिणै*) की कविताओं को उस क्षेत्र की अन्य परिस्थितियों को भी ध्यान में रखना होता था। इन *अकतिणै* रचनाओं में मुख्य चरित्रों के नाम (नायक, नायिका, उनके मित्र तथा विमाताएँ [*foster-mothers*] इनमें प्रधान चरित्र हैं) प्रकट नहीं किए गए हैं। लेकिन राजाओं तथा मुखियाओं का उनसे संबंधित मिथकीय तथा ऐतिहासिक घटनाओं के साथ इन रचनाओं में वर्णन है।

पुरम-काव्य में तिणै की संकल्पना बाह्य जीवन से संबंधित है जिसमें युद्ध-प्रसंग, नैतिकता तथा जीवन के मूल्य शामिल हैं। युद्धों के चरणों का वर्णन तिणै के रूप में किया गया है। प्रत्येक तिणै युद्ध के विभिन्न चरणों में प्रयुक्त होने वाले विशिष्ट फूल का संकेत करता है। वेत्ची तिणै मवेशियों की लूट के साथ युद्ध की शुरुआत का संकेत करता है। वंची (Vanchi) तिणै युद्ध की तैयारी जबकि उज़िनै (Uzhinai) तिणै घेरेबंदी का वर्णन करता है। थंबई (Thumbai) तिणै युद्ध की वास्तविक घटना से तो वकाई (Vakai) तिणै युद्ध में विजय से संबंधित है। पुरम गीत इनके मुख्य चरित्रों अर्थात् राजाओं और मुखियाओं तथा युद्धस्थलों के नामों का उल्लेख करते हैं। कुछ कविताओं की प्रकृति दार्शनिक है जो जीवन की नश्वरता पर बल देती हैं।

बोध प्रश्न-1

- 1) संगम साहित्य के विषय में विस्तार से चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

- 2) संगम साहित्य में तिणै की संकल्पना किस प्रकार अभिव्यक्त हुई है?

.....

.....

.....

- 3) तीन संगमों तथा उनके अनुमानित काल का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

7.3 संगम साहित्य में ऐतिहासिक चेतना तथा ऐतिहासिक परम्परा

भारतीय समाज अपनी ऐतिहासिक विरासत के लिए सुविख्यात है और तमिल क्षेत्र इसका अपवाद नहीं है। तमिलों ने आज तक भी कई सदियों से अपनी विरासत तथा इतिहास को बचाए हुए रखा है। केवल साहित्यिक साक्ष्य पर आधारित घटनाओं को सुदूर अतीत में स्थापित करने की परम्परा भी यहाँ रही है। अब तक की गई ऐतिहासिक तथा पुरातात्विक खोजों का प्रयोग तमिल संस्कृति को अत्यधिक पुरातन समय में विस्तारित करने के लिए किया जाता है।

अपनी विभिन्न विषयवस्तुओं के साथ संगम साहित्य सुदृढ़ ऐतिहासिक सामूहिक चेतना को प्रकट करता है। अतीत की सामूहिक स्मृति इन कविताओं में ऐतिहासिक परम्पराओं के रूप में स्थान पाती हैं और प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से समकालीन श्रोताओं के लिए भी इसी तरह व्यवहार करती हैं। स्मृति चयनात्मक होती है तथा अतीत का सम्पूर्ण सार समकालीन समाजों तक नहीं पहुँच पाता है। केवल उन ही घटनाओं को महत्व दिया जाता है जिन्हें कोई समाज याद रखता है और चाहता है कि भविष्य उन्हें याद रखे।

ऐतिहासिक पूर्व-बोध के तत्व तथा ऐतिहासिक जानकारी के समकालीन वर्णन इन शास्त्रीय कविताओं की दोनों ही शैलियों में पाए जाते हैं। आज उपलब्ध तमिल व्याकरण की प्राचीन पुस्तक तोलकाप्पियम 240 बार बिना नामों को प्रकट किए अपनी रचना के समय से पहले के ग्रंथों का उल्लेख करती है जिससे यह संकेत मिलता है कि व्याकरणिक नियमों को संहिताबद्ध किए जाने से पहले भी इसकी एक पूर्व-परम्परा और नियमों की व्यवस्था रही होगी।

यद्यपि संगम कृतियों को उन चारणों के उद्गार माना जाता है जिन्होंने राजाओं की सांसारिक गतिविधियों या प्रेम-प्रसंगों (पुरम तथा अकम) की प्रशंसा में इन गीतों को रचा था, उन्होंने अतीत में हो चुकी घटनाओं या अपने समकालीन घटना-प्रसंगों को सायास या अनायास दर्ज किया। इन कविताओं से अतीत की घटनाओं के साथ समकालीन सांस्कृतिक विवरणों को समझा जा सकता है।

समकालीन वर्णन अतीत की घटनाओं के अभिलेखन में प्राथमिकता रखते हैं। ऐतिहासिक चेतना के इन दो घटकों की इस इकाई में चर्चा की गई है:

- क) ऐतिहासिक अतीत का वर्णन जिसमें राजाओं की वंशावली, अतीत की घटनाओं, जैसे आक्रमण, वैदिक यज्ञ का संदर्भ, मिथकीय वंश-परम्परा, की चर्चा की गई है।
- ख) ऐतिहासिक विवरण जो चारणों, कवियों तथा लोक गायकों द्वारा देखी गई घटनाओं तथा विकासक्रमों की जानकारी प्रदान करते हैं।

ये वर्णन पुरम गीतों के संदर्भ में प्रत्यक्षतः तथा अकम गीतों के संदर्भ में अप्रत्यक्षतः इन कविताओं में गुथे हुए हैं।

7.3.1 अतीत का वर्णन

संगम-कालीन कविताएँ प्रेम तथा युद्ध-प्रसंगों का वर्णन करते हुए अनायास ही बीते हुए ज़माने की जानकारी काव्यात्मक रूप से समाहित किए हुए हैं। यहाँ अतीत का वर्णन करते हुए वंशावली, वंश-परम्परा, इतिहास-पुराण परम्परा तथा अन्य क्षेत्रों के इतिहास की चर्चा की गई है।

राजाओं की वंशावली

संगम रचनाएँ यत्र-तत्र राजाओं की वंशावली का उल्लेख करती हैं। तीन प्रमुख राजाओं, नामतः **चेरों**, **चोलों** तथा **पांड्यों**, का सामान्यतः उनकी पूर्वज परम्परा के साथ उल्लेख किया गया है। अष्ट-संग्रह में से एक *पतित्रुपथु* में चेरों के इतिहास का वर्णन मिलता है जिसमें बाद के समय, संभवतः पूर्व-मध्यकालीन समय, में पश्च-लेख/परिशिष्ट भाग (epilogues) जोड़े गए हैं।

इस काव्य में 10 *तेण/तेन* (10 खंडों में 10 कविताएँ) शामिल हैं। प्रत्येक खंड एक चेर राजा का वर्णन करता है। प्रथम और अंतिम *तेन/तेण* अब उपलब्ध नहीं हैं और हमें *पथित्रुपाथु/पथित्रुपथु* में उल्लिखित पहले और दसवें राजा के नामों के विषय में कोई जानकारी नहीं है। दूसरा *तेन/तेण* उतियाँ चेरालाथन तथा वेंमल नल्लिनी के पुत्र राजा इमायावरम्बन नेदुचेरालाथन की वीरता का वर्णन करता है। उसके बारे में कहा जाता है कि उसने चेरों के राजचिह्न धनुष को हिमालय पर अंकित किया था और अपने शत्रुओं को पराजित कर युद्ध में अपार धन प्राप्त किया था। उसने अपने शत्रुओं से प्राप्त अपार धन को अपनी राजधानी वांची (Vanchi) की प्रजा में बाँट दिया था। उसे कदम्बों को हराने का श्रेय भी दिया गया था जो द्वीप पर रहते थे और उसने उनके कुल-देवता के वृक्ष को भी काट दिया था। दूसरा *तेण/तेन* कुमात्तूर कन्नानार द्वारा लिखा गया है जिसे 500 ग्राम तथा राजा की आय का एक हिस्सा भी राजा इमायावरम्बन से उपहार के रूप में प्राप्त हुए थे।

तीसरा *तेन/तेण* कवि पलै कौथमानार द्वारा इमायावरम्बन नेदुचेरालाथन के भाई पल्यानई सेल्केजुकुट्टवन की प्रशंसा में लिखा गया है। इसका पश्च-लेख कवि द्वारा स्वर्ग पहुँचने की इच्छा और इस हेतु राजा से देवताओं के लिए 10 यज्ञ करने में सहायता प्रदान करने की प्रार्थना करने की कहानी कहता है। दसवें यज्ञ के अंत तक कवि कौथमानार और उसकी पत्नी स्वर्ग पहुँच जाते हैं। इस राजा को उमरिकाडु क्षेत्र में अकप्पा (Akappa) के दुर्ग पर विजय का श्रेय भी दिया गया था।

चौथा *तेन/तेण* कप्पियात्रु कप्पियानर द्वारा राजा कलंकै कन्नी नर्मुदी चेराल पर लिखा गया है। उसे 400 स्वर्ण सिक्के तथा शासन करने हेतु राज्य का एक भाग उपहार में दिया गया था। कलंकै कन्नी नर्मुदी चेराल इमायावरम्बन तथा उसकी पत्नी प्रद्युम्न देवी की संतान थी। उसकी विख्यात विजय वाकै परंथलाई के युद्ध में पुली क्षेत्र के राजा नन्नन/नान्नान के विरुद्ध हुई थी।

पाँचवाँ *तेन/तेण* चेर राजा कदल पिराकोट्टिय सेनगुट्टुवन की प्रशंसा में लिखा गया है और इसे परणर (Paranar) द्वारा लिखा गया था जिसे उमरिकाडु क्षेत्र से प्राप्त होने वाला राजस्व उपहार में सौंपा गया था। वह एक चोल राजकुमारी से उत्पन्न इमायावरम्बन नेदुचेरालाथन का पुत्र था। उसे हिमालय से कुमारी (Kumari) के बीच शासन करने वाले राजाओं को पराजित करने का श्रेय भी दिया गया है जो स्पष्ट तौर पर एक अतिशयोक्तिपूर्ण विवरण है। उसने नेरी वायिल के युद्ध में नौ चोल राजकुमारों को हराया था। छठा *तेन/तेण* कक्कई पडिनियार नचचेलैय्यार द्वारा चेर राजा अदुकोटपडू चेरालाथन के विषय में लिखा गया है। इस स्त्री कवियत्री द्वारा लाखों स्वर्ण सिक्के प्राप्त करने तथा एक पहाड़ी

के शीर्ष से आँख की परिधि में आने वाले क्षेत्र का दान पाने का उल्लेख है। अदुकोटपट्टू चेरालाथन कुट्टनाड/कुट्टनाडु से संबंध रखने वाले चेर वंश की शाखा के राजा चेरालाथन और उसकी रानी देवी, जो वेलावी कोमान की पुत्री थी, का पुत्र था। उसके राज्य से चुरा कर ले जायी गई बकरियों को उसके द्वारा पश्चिमी तट पर स्थित एक चेर बंदरगाह तोंदि (Tondi) में दंडकारण्य से वापस पश्चिमी तट पर स्थित चेर बंदरगाह तोंडई में लाने का उल्लेख मिलता है। उसकी उपाधि वन वरम्बन (*Vana Varanban*) थी जो आकाश तक उसकी शक्ति की सीमा होने का संकेत करती है।

सातवाँ तेन/तेण कवि कपिलार (Kapilar) द्वारा सेल्वकडुंगो वालियाडन पर लिखा गया था। कपिलार को राजा पर लिखे गए उसके दस गीतों के लिए राजा द्वारा हज़ारों स्वर्ण सिक्कों का उपहार प्रदान किया गया और साथ ही एक पहाड़ी के शीर्ष से नज़र में आने वाली भूमि भी प्रदान की गई। अपनी सैन्य शक्ति की अपेक्षा राजा की प्रशंसा विष्णु, जिन्हें मायावान कहा गया है और जिनके लिए उसने ओकांथुर (Okanthur) का गाँव दान में दिया था जिससे अच्छी गुणवत्ता का चावल वैदिक यज्ञों हेतु उपलब्ध कराया जाता था, की भक्ति के लिए अधिक की गई है।

आठवाँ तेन/तेण राजा पेरुमचेरल इरुम्पोराई की प्रशंसा में कवि अरिसिल किझर द्वारा लिखा गया है जिसे नौ लाख स्वर्ण सिक्कों के साथ राजा के राज्य में राज करने का अधिकार भी दिया गया था। लेकिन, कवि ने राजा को राज्य करने का अधिकार लौटा दिया। उसने चोलों और पांड्यों के अलावा तगादुर (Tagadur) क्षेत्र के अथियामन को हराया था। नौवाँ तेन/तेण पेरुमट्टुनल्लूर किज़हार द्वारा राजा कुडक्को इलांचेरल इरुम्पोराई की प्रशंसा में लिखा गया था और जिसे 32000 स्वर्ण सिक्के दान में प्राप्त हुए। यह राजा कुट्टनाड/कुट्टनाडु के स्वामी इरुम्पोराई और रानी वेनामल अंटुवनचेल्लै का पुत्र था। उसने चोल, पांड्य तथा विच्ची (Vichchi) राजाओं को पराजित किया। उसने राजधानी वांची से शासन किया जिसकी शक्तिशाली दैत्य अपनी शक्ति द्वारा सुरक्षा करते थे।

चेर राजाओं की वंशावली का वर्णन करते हुए पतित्रुपाथु यत्र-तत्र बिखरे हुए ऐतिहासिक तथ्यों के साथ चेर राजाओं के शासन का काव्यात्मक वर्णन प्रस्तुत करते हैं। इन कविताओं की ऐतिहासिकता को प्रमाणित करना वास्तव में मुश्किल काम है। काव्यात्मक अतिशयोक्ति को इस वंशावली-संबंधी कृति में होना ही था क्योंकि ये कवि अपने संरक्षक-राजा की अनुकंपा की इच्छा रखते थे। सभी कवियों के लिए विभिन्न कालों से संबंध रखने वाले इन विभिन्न राजाओं की प्रशंसा में गीतों की रचना करना संभव नहीं रहा होगा। इन कविताओं को एक विशेष समय में किसी राजा-विशेष द्वारा रचे जाने का निर्देश दिया गया होगा तथा बाद में इन्हें एक साथ संकलित किया गया होगा। ब्राह्मणों, ब्रह्मदेयों और वैदिक यज्ञों का उल्लेख तमिल क्षेत्र में उत्तरी भाग के प्रभाव को प्रदर्शित करता है। पतित्रुपाथु में बाद में जोड़े गए पश्च-लेख पतिकम/पटिकम वंशावली के रूप में अतीत के इतिहास को और साथ ही राजा की वीरता और विजयों के रूप में समकालीन प्रसंगों को दर्ज करते हैं। कविताओं के माध्यम से अतीत की स्मृतियों को पुनर्परिभाषित और नई पीढ़ी तक पुनः हस्तांतरित किया गया।

वंश-परम्परा

वंश एक पारिभाषिक शब्द है जो किसी कुल या कबीले का संकेत करता है जो समान पूर्वज से अपनी उत्पत्ति मानता है। समय के साथ विभिन्न सामाजिक-राजनीतिक कारणों से वंश के कुछ सदस्य (संभवतः वरिष्ठ सदस्य) अतीत में लोकप्रिय रही ऐतिहासिक परंपराओं को समाहित कर वैधता का दावा कर सकते थे और स्वयं को वर्तमान में लोकप्रिय बना सकते थे।

वंशावली के अलावा नायकों का वंश (अकम तथा पुरम, दोनों, शैलियों में) इस तरह चित्रित किया जाता था कि उनके चरित्र को मान्यता प्राप्त हो सके। विभिन्न पदावलियों, जैसे 'कुलीन, गोत्र, महान् कुटुंब का उत्तराधिकारी (उरवोन [Uravon], मारुगन, थोंडराल [Thondral]), पुरातन परंपराओं के वाहक तथा महान् कुटुंब के वंशज' का प्रयोग राजाओं तथा नायकों के श्रेष्ठ वंश को दर्शाने के लिए किया जाता था (पुरनानुरु 24, 27, 32, 58, 159, 356, 399; अकनानुरु 352)। उपर्युक्त तीन राजाओं को महान् वंश से संबंध रखने वाले के रूप में चित्रित किया गया है। किसी व्यक्ति का वंश राजा के रूप में उसकी महानता का सारतत्व था। कभी-कभी वंश का उपयोग न केवल राजा की प्रशंसा हेतु बल्कि गलतियों की ओर संकेत करने के लिए भी किया जाता था, जैसा कि पुरनानुरु के एक गीत (संख्या 43) से स्पष्ट होता है। पुरनानुरु की एक कविता (संख्या 45) चोल राजा करिकाल के वंश की प्रशंसा

उसके पूर्वजों की महानता का वर्णन करते हुए करती है जैसे शिबि जिसने एक कबूतर की रक्षा के लिए अपने शरीर के माँस का दान किया था। शिबि की कहानी बौद्ध *जातकों* तथा *महाभारत* की कथा, दोनों, में पाई जाती है। कवि राजा के वंश पर प्रश्न करते हुए कहता है कि क्या वह वास्तव में चोलों के उस महान् कुल से संबंध रखता है क्योंकि उसने ब्राह्मणों पर अत्याचार किया है। किंतु अंततः वह राजा को अपने इस गीत में क्षमा प्रदान करता है तथा उसकी प्रशंसा करता है।

थुवरई (Thuvurai) (जिसकी पहचान कर्नाटक में होयसलों के द्वारसमुद्र से की गई है) के वेलिर (Velir) नामक शासक की महानता का वर्णन करते हुए उसके पूर्वजों की 49 पीढ़ियों की प्रशंसा की गई है (पुरनानुरु 201)। संभवतः वंश की प्राचीनता स्थापित करने के लिए सात पीढ़ियों को सात बार अंकित किया गया है। थुवरई (Thuvurai) के नगर की पहचान गुजरात के पश्चिमी तट पर स्थित द्वारका से भी की जाती है।

वैवाहिक संबंधों में भी स्त्री और पुरुष के वंश का महत्व ध्यान में रखा जाता था और इन शास्त्रीय कविताओं में ऐसे संदर्भ भी मिलते हैं कि ऐसे व्यक्ति के साथ वैवाहिक संबंध स्थापित करना असम्भव था जो किसी विशेष वंश से संबंध न रखता हो (पुरनानुरु 345, 353)।

इतिहास-पुराण परम्पराएँ

संगम साहित्य वैदिक धर्म के साथ संबंधित विभिन्न कथाओं के संबंध में जानकारी उपलब्ध कराता है। इससे संकेत मिलता है कि तमिल कवि अपने स्थान-विशेष से बाहर स्थित देश के उत्तरी भाग में हो रहे विकासक्रमों से परिचित थे। यह याद रखा जाना चाहिए कि कुछ विद्वानों द्वारा संगम कृतियों के कुछ संकलन बहुत बाद में मध्यकाल (12वीं शताब्दी तक) में तिथिबद्ध किए गए हैं, जैसे *कलिट्टोकाई/कालिट्टोकाई* और *तिरुमुरुगात्रुप्पदै*।

यद्यपि प्राचीन तमिलों के पाँच प्रकार के भू-परिदृश्यों में अपने-अपने देवता थे, जैसे सियोन/सेयोन (भगवान मुरुगा/सुब्रमण्य) पर्वतीय क्षेत्र *कुरिंजी* के, मायोन (भगवान विष्णु) चरागाह क्षेत्र *मुल्लै* के; वेंदन (इंद्र देव) नदी के तटवर्ती क्षेत्र *मरुतम* के; वरुण देव तटीय क्षेत्र *नेयतल* के और *कोतरावै/कोटरावई* (देवी दुर्गा) शुष्क क्षेत्र *पालै* की (पुरनानुरु 1 तथा *अकनानुरु* 1), लेकिन इनमें शिव का उल्लेख *अर्धनारीश्वर* (पुरनानुरु 1) तथा *त्रिपुरांतक* (*कलिट्टोकाई/कालिट्टोकाई* 1) के रूप में है। यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि मंगलाचरण के श्लोक इन संकलनों में पेरुंडेवनार द्वारा लिखे गए हैं जिन्होंने *महाभारत* की तमिल में रचना की थी और जो 9वीं शताब्दी सी ई के पल्लव शासक नंदीवर्मा के समकालीन माने जाते हैं।

कुछ संगम गीतों में भारत के दो महान् संस्कृत महाकाव्यों *महाभारत* और *रामायण* का भी उल्लेख मिलता है जिससे यह संकेत मिलता है कि *तमिलकम/तमिलहम* के लोग भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तरी हिस्से के प्रमुख महाकाव्यों से परिचित थे। वैदिक देवताओं से संबंधित कथाओं का भी इन कविताओं में उल्लेख मिलता है। पुरनानुरु (2) में एक चेर राजा द्वारा अन्हवट (घोड़ों की आँखों का पर्दा जिससे वे सीधे ही देखें) लगाए घोड़ों को अधिकार में रखते पांडवों तथा कौरवों, जो पांडवों द्वारा धराशायी हो जाने से पूर्व स्वर्ण-मालाएँ (garlands) धारण किए हुए थे, की सेनाओं को भोजन कराने का उल्लेख मिलता है। यद्यपि भारत-युद्ध तथा संगमकालीन चेर आपस में समकालीन नहीं हो सकते हैं, यह अनुमान लगाया जा सकता है कि *महाभारत* की कथा प्रचलन में थी तथा चेर राजा द्वारा अपने उन पूर्वजों की स्मृति में चावल का भोजन दिया गया हो जिन्होंने किवदंती बन चुके इस अखिल भारतीय युद्ध में हिस्सा लिया हो, जैसा कि तमिल विद्वानों ने अवलोकन किया था। *पेरुम्पानात्रुप्पदै* (415-417) में दो-पचास (100 कौरव) योद्धाओं तथा पांडवों के बीच रथों के साथ हुए महान् युद्ध का उल्लेख है।

दुर्योधन द्वारा पांडवों हेतु लाक्षागृह का निर्माण और उन्हें जलाकर मार डालने का प्रयास तथा पवन देव के पुत्र भीम की सहायता से उनके बच निकलने की कथा (*कलिट्टोकाई/कालिट्टोकाई* 25) का उल्लेख भी मिलता है। अक्रूर का उल्लेख अक्कूरन/अक्कूरन के रूप में है जो *महाभारत* के युद्ध में कौरवों के विरुद्ध पांडवों के पक्ष में लड़ा था (*पथित्रुपाथु/पथित्रुपथु* 14: 5.7)। *कलिट्टोकाई* (52) में भीम के द्वारा दुर्योधन की जंघा पर प्रहार कर उसके वध का उल्लेख है। *सिरुपानात्रुप्पदै* (238, 241) में खाण्डव वन को नष्ट करने वाले अर्जुन के भाई भीम की पाककला पर चर्चा है।

भगवान राम द्वारा रावण के विरुद्ध श्रीलंका के लिए अभियान पर निकलते समय पक्षियों को चुप कराने का उल्लेख भी है (पुरनानुरु 70)। चोल राजा इलमवेचेन्नी से उपहार में स्वर्णाभूषण प्राप्त करने पर कवि उन पोडी पेरुवुदैयार के रिश्तेदार उपहार पाने के उल्लास में आभूषणों को गलत ढंग से पहनने लगे। कवि द्वारा उनकी तुलना रावण द्वारा अपहरण कर लिए जाने पर सीता द्वारा फेंके गए आभूषणों को वानरों द्वारा धारण कर लेने से की गई है (पुरनानुरु 378)।

पुरनानुरु का एक गीत (56) वैदिक देवताओं जैसे यम, बलराम, कृष्ण तथा सुब्रमण्य का उल्लेख करता है तथा उनकी तुलना पांड्य राजा इलावंतिकै थुंजिय ननमाराण के वीरतापूर्ण गुणों से करता है। एक अन्य गीत (पुरनानुरु 58) यह संकेत करता है कि चोल तथा पांड्य राजाओं का स्वरूप गौर वर्ण बलराम तथा श्याम वर्ण कृष्ण के समान था। पेरुम्पानात्रुप्पदई (29-30) में श्याम वर्ण के विष्णु तीन लोकों को मापने वाले त्रिविक्रम के रूप में उल्लिखित हैं। यही कविता (402) ब्रह्मा के भगवान विष्णु के नाभि-कमल से प्रकट होने का उल्लेख करती है। अकनानुरु (59) में कृष्ण द्वारा गोपियों के वस्त्र चुरा लेने तथा उन्हें यमुना के तट पर स्थित वृक्षों की पत्तियों से बने वस्त्र देने के प्रसंग का उल्लेख मिलता है। कलिट्टोकाई/कालिट्टोकाई (103) में कृष्ण के हाथों कंस द्वारा भेजे गए तथा घोड़े के रूप में आए दैत्य के वध की घटना का उल्लेख भी मिलता है। मदुरैकांची (591) में भगवान विष्णु के जन्म-नक्षत्र थिरुवोणम के अवसर पर आयोजित होने वाले उत्सव का भी उल्लेख मिलता है।

रावण द्वारा शिव के निवास कैलाश पर्वत को उठाने का वर्णन कलिट्टोकाई/कालिट्टोकाई (38) में मिलता है। गुरु बृहस्पति तथा शुक्राचार्य द्वारा लिखे गए राजनीतिक प्रबंध-ग्रंथों का उल्लेख (कलिट्टोकाई/कालिट्टोकाई 99) भी मिलता है। इसी कविता में शिव के उस स्वरूप को कालांतक/कलंतक कहा गया है जिसने मृत्यु के देवता यम का वध किया था (कलिट्टोकाई/कालिट्टोकाई 124)। ब्रह्मा द्वारा जल-प्रलय (कलि) के बाद सृष्टि की रचना और दक्षिणामूर्ति का स्वरूप (कलिट्टोकाई/कालिट्टोकाई 133) तमिल साहित्य में वैदिक कथाओं के प्रभाव का संकेत करते हैं।

परिपादल (19/50-52) में अकल्या/अहिल्या के साथ छल करने के लिए इंद्र द्वारा गौतम ऋषि का रूप धरने का उल्लेख है। परिपादल भगवान विष्णु और भगवान मुरुगा के यश को रेखांकित करता है, यद्यपि इस कृति को बाद की तिथि का माना जा सकता है।

वैदिक अनुष्ठानों का आयोजन

तमिल साहित्य में वैदिक यज्ञों का उल्लेख है जो भारत के उत्तरी भाग के संपर्क में आने और दक्षिण भारत में ब्राह्मणों के पुरोहित वर्ग के प्रवास से प्रचालन में आए थे। चेर राजा पल्यानै सेलकैलुकुट्टुवन को वैदिक यज्ञ करने का श्रेय दिया गया है और इन यज्ञों से उठने वाले धुएँ के आकाश को छूने का उल्लेख है (पतित्रुपाथु 3: 21)। पांड्य राजा पल्यानै मुतुकुट्टुमि पेरुवलुति तथा चोल राजा राजसुयम वेट्टी पेरुनार्किलि से इन राजाओं द्वारा वैदिक यज्ञों को दिए गए महत्व का पता चलता है। यह संभवतः उत्तर भारत से आई विचारधाराओं और इन शासकों द्वारा आनुष्ठानिक नियंत्रण पाने और अपनी सत्ता को वैध ठहराने के कारण था।

मदुरैकांची (759-760) में राजा नेदुंचेलियन को कवि द्वारा मदुरै में यज्ञ के आयोजन की सलाह दी गई है जिस तरह उसके पूर्वज पालसलाई मुदुकुडुमी ने भी किया था। अकनानुरु के एक गीत (13) में कोडाई (Kodai) क्षेत्र के मुखिया पन्नी द्वारा किए गए यज्ञ का उल्लेख है। पुरनानुरु (6,9,15, 361) में ब्राह्मणों के साथ उनके द्वारा किए जाने वाले यज्ञों का भी उल्लेख है।

तमिल क्षेत्र के बाहर के क्षेत्रों का अभिलेखन

संगम साहित्य कहीं-कहीं तमिल क्षेत्र से बाहर मौजूद राजाओं तथा राज्यों का भी उल्लेख करता है। इससे पता चलता है कि प्राचीन तमिल लोग इस तरह के राज्यों तथा स्थानों के अस्तित्व से परिचित थे तथा इन्हें इन कविताओं में अभिलिखित किया गया है। स्मृति के माध्यम से ये इन कविताओं में समाहित तथा पुनः समाहित होते रहे।

यद्यपि तमिल शासकों का अधिकार तमिल क्षेत्र में था वे भारतवर्ष के संपूर्ण क्षेत्र से अवगत थे। पुरनानुरु (3) पांड्य राजा पल्यागसलाई मुदुकुडुमी पेरुवाजुथि के राज्यक्षेत्र के विस्तार का वर्णन उत्तर में हिमालय, दक्षिण में कुमारी और पूर्वी व पश्चिमी छोरों पर स्थित सागर तक बताता है। गंगा नदी का

उल्लेख *पट्टिनप्पालै* (190), *पेरुम्पानात्रुप्पदई* (429, 433), *नटरिणै* (7) में मिलता है जिसे स्वर्ग से निकलने वाली नदी, देवताओं के निवास से निकलने वाली नदी, नदी जिसे पार करना कठिन हो और समुद्र में प्रवेश करने वाली नदी के रूप में वर्णित किया गया है।

इन शास्त्रीय कविताओं में हिमालय का भी उल्लेख मिलता है। एक *पुरनानुरु* गीत (132) उत्तर में हिमालय और दक्षिण में अय राज्य के अस्तित्व के कारण दुनिया में संतुलन स्थापित होने का उल्लेख करता है। हिमालय में पाए जाने वाले जल-प्रपातों का उल्लेख भी *पुरनानुरु* (369) में है। *नटरिणै* में समुद्र का वर्णन निचले क्षेत्र में तथा उठे हुए क्षेत्र में हिमालय के अवस्थित होने का उल्लेख है। ये वर्णन सम्भवतः यह संकेत करते हैं कि तमिल कवियों को या तो हिमालय जैसे सुदूर स्थानों की प्राथमिक रूप से जानकारी थी या उन्होंने व्यापारियों और तीर्थयात्रियों से इन दूर स्थित क्षेत्रों के विषय में जानकारी पायी थी और अपने काव्यों में इन्हें अमर बना दिया।

उत्तर के राजा

संगम साहित्य तमिल क्षेत्र में शासन करने वाले महत्वपूर्ण शासकों — पांड्यों (तमिल क्षेत्र का सबसे पुराना राजवंश जो तमिलनाडु के दक्षिणी हिस्से में शासन करता था), चेरों (मोटे तौर पर आधुनिक समय के केरल क्षेत्र के शासक) तथा चोलों (मध्य तमिलनाडु के शासक) — का उल्लेख है। दिलचस्प है कि अशोक के अभिलेख पाडों (पांड्य), चोडों (चोल) और केरलपुत्रों (चेर) तथा सत्यपुत्रों का दक्षिणी पड़ोसियों के रूप में उल्लेख करते हैं।

अरुवर, ओलियार, वातकार जैसी जनजातियाँ, जिन्होंने तमिल क्षेत्र के उत्तरी हिस्से (आज के आंध्र तथा कर्नाटक क्षेत्र) पर शासन किया था, का उल्लेख भी इन तमिल शास्त्रीय ग्रंथों में मिलता है। कविताओं में तमिल क्षेत्र की तीन मुख्य राजसत्ताओं द्वारा सीमावर्ती क्षेत्रों के उन राजाओं, जो तमिल से भिन्न भाषाएँ बोलते थे, के विरुद्ध छेड़े गए युद्धों का वर्णन मिलता है।

अपने प्रियजनों को पीछे छोड़कर संपत्ति की तलाश में निकलने वाले नायक *अकनानुरु* गीतों की एक सामान्य विषयवस्तु हैं। *अकनानुरु* कविता (251) एक नायक का वर्णन करते हुए उल्लेख करती है कि नायिका की सखी उसे समझाती है कि नंदों का धन भी नायक को नहीं रिझा पाएगा और वह जल्द ही लौटेगा।

एक अन्य प्रकरण में पुनः नंदों की संपत्ति का उल्लेख आया है। *अकनानुरु* (265) पाटलिपुत्र नगर का उल्लेख करता है जहाँ नंदों को खज़ाना मिला और उन्होंने उसे गंगा नदी के भीतर छुपाया हुआ था।

मौर्यों, जिनके रथों ने चट्टानी सतह को समतल कर दिया था, का उल्लेख संगम साहित्य में दर्ज अतीत के इतिहास की ओर संकेत करता है। मौर्यों के रथों, जिनके लोहे के पहियों ने सीमा-क्षेत्रों की चट्टानी सतह को कुंद बना दिया था, का संदर्भ (*अकनानुरु* 69, 251) मौर्यों द्वारा मोकुर के राजा के विरुद्ध कोसरों की मदद करने का संकेत करता है। *पुरम* गीत श्वेत छत्रों और पताकाओं से सुसज्जित उच्च गुणवत्ता वाले मौर्य रथों का वर्णन करते हैं (*पुरनानुरु* 175)।

अकनानुरु (281) में दक्षिणी भाग में मौर्य सेना के आक्रमण का उल्लेख है जिसकी अगुआई वतुकार (Vatukars) कर रहे थे। जब इस कविता का नायक संपत्ति की लूट के लिए सीमा क्षेत्र को पार करता है नायिका अपनी सखी को बताती है कि नायक ने सीमा को पार कर लिया है जहाँ दक्षिणी हिस्सों पर आक्रमण हेतु मौर्यों के रथ चट्टानों से कटे हुए मार्ग पर चले आ रहे हैं जिनको अग्र भाग में वतुकारों का समर्थन मिला हुआ है।

चोलों, पांड्यों और चेरों, जिन्हें वेंटारों (Ventars) के रूप में जाना जाता था, के अलावा अन्य मुखिया भी थे जिन्होंने अपने साहस, न्यायपूर्ण शासन और कवियों और चारणों को दिए गए सम्मान के कारण महत्व प्राप्त किया था। संगम साहित्य सात मुखियाओं की महान् दानदाताओं के रूप में प्रशंसा करता है जिन्होंने पक्षियों तथा मोगरे की लताओं के अतिरिक्त चारणों को बहुत कुछ उपहार में दिया था। संगम कविताएँ सात राजाओं, जिनके नाम परि, करि, अय, ओरि, पेगन, अथियामन और नल्लि/नल्ली हैं, की विनम्र उदारता का उल्लेख करते हैं। उनकी कथाओं तथा उदारता को एक से अधिक जगह पर दोहराया गया है (*पुरनानुरु* 158, *सिरुपानात्रुप्पदई* 84-115) और उनकी महानता इन कथाओं और कविताओं में अमरता पा गई है।

कवयित्री अवैयार/औवैयार तगादुर के मुखिया अथियामन के साहस का वर्णन करते हुए यह तथ्य भी दर्ज करती हैं कि उसके महान् पूर्वजों द्वारा यज्ञों का निष्पादन किया गया तथा उन्होंने तमिल क्षेत्र में गन्ने की खेती का प्रचलन करवाया (पुरनानुरु 99)। यह विश्वास कि अथियामन के पूर्वज तमिल भूमि में विदेशी क्षेत्र से गन्ने की खेती लाए थे (पुरनानुरु 392) बाद के समय में भी प्रचलित था जैसा कि विलियम लोगन ने मालाबार मैनुअल में दर्ज किया है।

पुरम गीत सामान्यतः नायक के पूर्वजों का उल्लेख करते हैं तथा कभी-कभी यह वंशावली एक मिथकीय पूर्वज-परम्परा का रूप ले लेती है। पेरुम्पानत्रुप्पदई के नायक का उल्लेख तोंडईमान (Tondaiman) के वंशज के रूप में है और अंततः भगवान विष्णु के वंशज के रूप में। यह एक ऐसी परम्परा थी जो मध्यकाल में भी जारी रही। इसका पता हमें अभिलेखों से चलता है जिनमें राजनीतिक तथा मिथकीय, दोनों, पूर्वज-परम्पराओं को तमिल क्षेत्र में पल्लवों से शुरुआत के रूप में उद्धृत किया जाता था। यह देखा गया है कि ऐसे 30 से अधिक उदाहरण हैं जहाँ इन गीतों में पूर्वज-परम्परा का उल्लेख किया गया है।

बोध प्रश्न-2

- 1) 'संगम साहित्य अतीत की घटनाओं के अभिलेखांकन के माध्यम से ऐतिहासिक चेतना को संरक्षित करता है'। इस कथन का औचित्य सिद्ध कीजिए।

.....

.....

.....

- 2) संगम साहित्य में प्रतिबिम्बित वैदिक अनुष्ठानों के निष्पादन की प्रकृति का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

- 3) संगम साहित्य में इतिहास-पुराण परम्परा की उपस्थिति को स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

- 4) विभिन्न प्रक्षेत्रों का संगम साहित्य में किस प्रकार निरूपण किया गया है?

.....

.....

.....

7.3.2 ऐतिहासिक विवरण

संगम साहित्यिक कृतियों का उपयोग प्राथमिक रूप से आरम्भिक ऐतिहासिक काल, जिसके ये कृतियाँ समकालिक थीं, के इतिहास की पुनर्रचना हेतु किया गया है।

हेरोडोटस की हिस्टरीज़ की तरह ही संगम रचनाएँ आरम्भिक ऐतिहासिक काल के दौरान जीवन के विभिन्न पहलुओं पर विचार करती हैं। इस प्रकार वे बीते युग की ऐतिहासिक विरासत का गुंणगान करती हैं। यह साहित्य उन विभिन्न ऐतिहासिक युद्धों का विवरण देता है जो संगम काल के विभिन्न शासकों के बीच लड़े गए थे।

राजाओं तथा राज्यों के ऐतिहासिक विवरण

आठ संग्रहों में शामिल अकम तथा पुरम गीत उन कुछ घटनाओं का उल्लेख करते हैं जो तब घटित हुई थीं। ये सभी पृथक् तथा लघु कविताएँ हैं। दस विस्तृत कविताओं पाथुपट्टू (Pathupattu) में कुछ ऐसी रचनाएँ हैं जो विशेष रूप से किसी एक राजा पर ही केंद्रित हैं। ये गीत अपनी प्रकृति में विवरणात्मक तथा विस्तृत हैं। ये कविताएँ लघु-स्वरूप की मुल्लैपट्टू (103 पंक्तियाँ) से लेकर सबसे

विस्तृत *मदुरैकांची* (782 पंक्तियाँ) भिन्न-भिन्न स्वरूप की हैं। एक चारण किसी राजा से पर्याप्त उपहार पाने के बाद दूसरे चारणों को उसी राजा के पास जाने का रास्ता दिखाता था, उस राज्य तक पहुँचने के रास्ते तथा भूगोल को समझाते हुए। इसे *आत्रुप्पदाई* (शाब्दिक अर्थ 'राह दिखाना') कहा जाता था। दस लम्बी कविताओं में पाँच *आत्रुप्पदाई* कविताएँ हैं। इनमें से चार (*पोरुनरात्रुप्पदाई*, *पेरुम्पनात्रुप्पदाई*, *सिरुपानात्रुप्पदै*, *मलैपादुकडम* या *कूथात्रुप्पडै*) चारणों को राजा तक पहुँचने की राह बताते हैं तो पाँचवाँ (*तिरुमुरुगात्रुप्पादै*) ईश्वर तक पहुँचने का मार्ग दिखाता है। *पट्टिनापालै* तथा *मदुरैकांची* राजाओं तथा राज्यों के विषय में मूल्यवान जानकारी उपलब्ध कराते हैं।

चोल सम्राट करिकाल दस लम्बी कविताओं में से दो का नायक है जिनका नाम *पोरुनरात्रुप्पदै* तथा *पट्टिनापालै* है। इनकी रचना कदियालुर उरुथिरन कन्नानार ने की थी। इन कविताओं से बंदरगाह-नगर कावेरीपुम्पट्टिनम, जहाँ कावेरी नदी सागर से मिलती थी, का विस्तृत विवरण मिलता है। यह बंदरगाह-नगर व्यापारिक गतिविधियों तथा आयात और निर्यात में संलग्न जहाजों की आवाजाही से गुलज़ार था। नीचे उद्धृत पंक्तियों में यह पण्य-वस्तुओं की जानकारी देता है जिससे फलते-फूलते व्यापार का पता चलता है।

हिमालय भेजता है रत्न और स्वर्ण
जबकि कुडा पहाड़ियों से आता है चंदन काष्ठ
और अखिल; दक्षिणी सागर से आते हैं मोती
लाल मूंगा पूर्वी सागर से
गंगा और कावेरी लाती हैं
अपनी उपज; लंका से आता है वहाँ का भोजन
और बर्मा से विरल विनिर्मित वस्तुएँ

215-221, *चैलैया*, 1946

यह कविता तिरुमावलवन के नाम से ज्ञात एक राजा का वर्णन करती है जिसकी पहचान करिकाल से की गई है। उसका चित्रण एक व्याघ्र-शावक के रूप में किया गया है जिसने ओलियार, अरुवलार, कुडावर/कुदावर, पोडुवार, इरुंगोवेल, थेन्नावन, वडावर/वडावार जैसे कई शासकों को पराजित किया। इसके अतिरिक्त उसे बहुत से तालाबों का निर्माण कर चोल देश को अधिक हरा-भरा और समृद्ध बनाने का श्रेय भी दिया गया है। उसने वन-भूमि को नष्ट कर चोल राज्य का विस्तार करने हेतु कई नए नगरों का भी निर्माण किया। उसे कावेरी नदी में एक बाँध, जिसे *कल्लनै* (पाषाण-निर्मित बांध) कहा जाता था, के निर्माण का श्रेय भी दिया गया है।

मुदथामा कन्नियार द्वारा रचित *पोरुनरात्रुप्पदै* करिकाल की प्रशंसा में रचा गया है जो वेन्नि (जिसकी पहचान आज के तिरुवरुर ज़िले में स्थित कोविल वेन्नि से की गई है) में उसकी युद्ध कला का वर्णन करता है। चूँकि यह करिकाल के केवल शुरुआती युद्धों का उल्लेख करता है अतः इसे *पट्टिनापालै* से पहले की रचना माना जाता है। कदियालुर उरुथिरन कन्नानार द्वारा रचित *पेरुम्पनात्रुप्पदाई* के नाम से ज्ञात एक अन्य *आत्रुप्पदाई* रचना कांचीपुरम के तोंडैमन इलांथिरायण के साहस तथा उदारता का वर्णन करता है। यह कवि इस राजा तक पहुँचने के मार्ग में पड़ने वाले भू-दृश्यों का वर्णन करते हुए अन्य कवि को राह बताता है और यह तमिल क्षेत्र के विभिन्न भू-दृश्यों पर रोशनी डालता है।

संगम कवि विभिन्न मार्गों का वर्णन करते हैं जिनका अनुसरण कर वे विभिन्न राज्यों में वहाँ के मुखियाओं की प्रशंसा में गीत रचकर उपहार पाने की इच्छा से पहुँचते हैं। *आत्रुप्पदाई* साहित्य विशेष रूप से राजा तक पहुँचने हेतु एक चारण द्वारा पार किए जाने वाले विभिन्न भू-दृश्यों में स्थित गाँवों और नगरों का वर्णन करता है। नाथथनार द्वारा रचित *सिरुपनातरुप्पदाई* में ओयमानाडु के राजा नल्लियाकोडन की प्रशंसा की गई है। दिलचस्प ढंग से यह चेरों की राजधानी वांची, पांड्यों की राजधानी मदुरै तथा चोलों की राजधानी उरथै (*Urathai*) का वर्णन करता है। चेर राजा की प्रशंसा ऐसे व्यक्ति के रूप में की गई है जिसने धनुष के राजचिह्न को हिमालयों में अंकित कर दिया था (*सिरुपनातरुप्पदाई* 48-49)। मदुरै नगर की प्रशंसा ऐसे नगर के रूप में की गई है जहाँ तमिल भाषा फल-फूल रही थी। यह कवि उन कई स्थानों का वर्णन करता है जो इस राजा के राज्य की ओर जाने के मार्ग में पड़ते हैं। आमु, वेलूर/वेल्लूर, एडिपट्टिनम, माविलंगई, आदि नगरों का वर्णन भी किया गया है। इन स्थानों की पहचान तमिलनाडु के उत्तरी भागों में स्थित स्थानों से की गई है।

संगम काल के सात प्रसिद्ध उदार राजाओं को उनके कृत्यों के साथ इस कविता में दर्ज किया गया है और नल्लियकोडन की उदारता की इन सबमें श्रेष्ठता स्थापित की गई है।

मदुरैकांची की रचना पांड्य राजा नेदुचेलियन की प्रशंसा में की गई है। यह कविता मनोहारी ढंग से मदुरै के भू-दृश्य का वर्णन करती है। इसकी ऊँची दीवारों, दुर्गीकरण, खाई-खंदक (moat), चौड़ी सड़कों, पूजा स्थलों तथा विभिन्न व्यवसायों में संलग्न लोगों का वर्णन भी किया गया है। यह कविता बताती है कि प्राचीन महान् कुटुम्ब से संबंध रखने वाले राजा नेदुचेलियन ने तलैलंकनम में अपने शत्रुओं को पराजित किया तथा सालियुर (Saliyur) के बंदरगाह-नगर पर कब्ज़ा कर लिया। उसने कोरकै में शासन किया जो उसके नियंत्रण में एक बंदरगाह-नगर था। इस कविता में बहुत ही सूक्ष्म जानकारी, जैसे राजा द्वारा पहने जाने वाले कलफ़दार सूती वस्त्र, का उल्लेख भी मिलता है (720-721)।

युद्धक्षेत्र

यह साहित्य युद्ध तथा युद्धों की विभीषिका का जीवंत वर्णन करता है। युद्ध के संदर्भ *अकम* तथा *पुरम*, दोनों, कविताओं में मिलते हैं। युद्ध में गए हुए नायक की वीरता का वर्णन करते हुए *अकम* कविताएँ विस्तृत रूप से शत्रु सेनाओं, युद्धक्षेत्र तथा अंतिम विजय का उल्लेख करती हैं। नायिका को आश्वस्त किया जाता है कि नायक शीघ्र ही घर लौट आएगा। *पुरम* कविताओं में उनके द्वारा प्राप्त विभिन्न विजयों की मुक्त कंठ से प्रशंसा की गई है। यहाँ तीन महत्वपूर्ण युद्धों का वर्णन किया जा रहा है ताकि शास्त्रीय काव्यों में युद्धों के बखान के स्वरूप को समझा जा सके।

वेन्नि परंतलाई के युद्ध में युवा चोल राजा करिकाल द्वारा दो मुख्य राजाओं तथा 11 मुखियाओं को हराने की बात कही गई है। *अकनानुरु* (246) वर्णन करती है कि युद्ध के बाघ कोने में पड़े हुए थे जब साहसी करिकाल ने सभी राजाओं को पराजित कर दिया। *अकनानुरु* (55) वेन्नि युद्ध क्षेत्र का साक्ष्य देता है जहाँ चेर राजा, जो पीठ पर वार होने से घायलावस्था में था, ने उत्तर की ओर खड़े होकर हाथ में तलवार लेकर आत्महत्या कर ली क्योंकि पीठ पर हमले से घायल होना अपमानजनक माना जाता था। एक कवयित्री राजा करिकाल को सम्बोधित करते हुए वस्तुतः इस आत्मघात के कृत्य के लिए चेर राजा की प्रशंसा करती है (*अकनानुरु* 66)।

करिकाल चोल से संबंधित अन्य युद्ध वागई परंतलाई में हुआ था जहाँ उसने नौ शासकों को हराया जिन्होंने अपने राजकीय छत्र गवाँ दिए थे और जो लड़ाई के मैदान से भाग खड़े हुए थे (*अकनानुरु* 125)। *पोरुनरत्रुप्पदै* (*Porunaratrappadai* 139-46) ने युवा करिकाल द्वारा दो राजाओं – चेर तथा पांड्य राजा – की पराजय की तुलना बाघ के शावक द्वारा अपने प्रथम प्रयास में ही हाथी पर विजय से की है। सम्भवतः यह युद्ध वेन्नि की लड़ाई के ही क्रम में था। इन युद्धों के माध्यम से करिकाल ने अन्य राजाओं के ऊपर अपना आधिपत्य जमा लिया।

अन्य प्रमुख युद्ध जिसका उल्लेख हुआ है वह आलंकनम का युद्ध है। पांड्य राजा सेलियान ने सात शासकों को पराजित किया जिनके नाम चेर, चोल, तिथियन/तिथियान, एलिनी, एरुमयुरान, इरुंकोवेनमन तथा पोरुनन थे। जब इस युवा राजा को अपने क्षेत्र में हमले की जानकारी हुई तो उसने एक कविता की रचना की जिसमें उसने कहा कि यदि वह शत्रुओं को पराजित नहीं करता है और उनके राज-छत्रों का हरण नहीं करता है तो उसकी प्रजा उसे एक दुष्ट राजा कहते हुए कोसेगी। दिलचस्प रूप से एक कवि इस युद्ध का साक्षी बना जो इसे यह कहते हुए दर्ज करता है कि सेलियान युद्ध में एक हाथी की तरह प्रवेश करता है तथा कई सैनिकों का सामना करता है (*पुरनानुरु* 72)। कवि यह निष्कर्ष निकालता है कि युद्ध शीघ्र ही समाप्त होगा तथा कुछ ही लोग बचे रह पाएँगे (*पुरनानुरु* 79)।

राजा सेलियान ने उन सभी को एक ही दिन में युद्ध क्षेत्र में धराशायी कर दिया और शत्रु राजाओं के श्वेत छत्रों पर अधिकार कर लिया (*पुरनानुरु* 25, 76, *अकनानुरु* 36)। एक कवि (*पुरनानुरु* 76) युद्ध के प्रसंगों को सुनकर इस विजय को अभूतपूर्व विजय के रूप में दर्ज करता है।

समकालीन घटनाओं का अभिलेखांकन

अधिकतर कविताएँ अतीत की घटनाओं का वर्णन करती हैं और कुछ गीत उन घटनाओं का विवरण देते हैं जिनको कवियों द्वारा दर्ज किया गया है। *पुरनानुरु* गीत (46) का एक कवि चोल राजा की आलोचना

इस बात के लिए करता है कि वह युद्ध में पराजित राजा की दो संतानों को हाथी के पाँव के नीचे कुचलकर मारना चाहता है। यह कवि राजा की शिबि के वंशज के रूप में प्रशंसा करता है जिसने एक कबूतर के जीवन की रक्षा हेतु स्वयं के शरीर के माँस का दान किया था और साथ ही राजा को इन बालकों की निर्दोषता के विषय में बताता है और उचित कार्य करने का विकल्प उस पर छोड़ता है।

मुखिया परी, जो युद्ध क्षेत्र में अन्य राजाओं द्वारा मारा गया था, की पुत्रियाँ यह कहकर शोक प्रकट करती हैं कि पिछली पूर्णिमा के दिन उनका पिता और उसका राज्य जीवित थे जबकि इस पूर्णिमा के दिन उनके पिता युद्ध में मारे गए हैं और उनका राज्य छीन लिया गया है (पुरनानुरु 112)।

कवि कपिला, जो स्वयं को एक ब्राह्मण बताता है, परी की इन दो पुत्रियों की ज़िम्मेदारी लेता है। वह कुछ मुखियाओं के पास जाकर इन बालाओं को विवाह में स्वीकार करने की प्रार्थना करता है और गीतों में उन्हें संबोधित करता है। एक कवयित्री लिखती है कि उसे राजा एवी के प्रातःकाल में गम्भीर रूप से घायल हो जाने की सूचना मिली है और वह इस पर विश्वास नहीं कर सकी है। वह प्रार्थना करती है कि यह सूचना निराधार हो (पुरनानुरु 233)।

संगम कवि न केवल अतीत और अपने समकालीन समय के राजनीतिक इतिहास का उल्लेख करते हैं बल्कि लोगों की सामाजिक-आर्थिक स्थितियों का भी उल्लेख करते हैं। भू-परिदृश्य का पाँच प्रकारों में विभाजन, उनके व्यवसायों, संगीत परम्परा, समय, मौसम, पक्षियों, जल-स्रोतों, वनस्पति, जीव-जंतुओं का उल्लेख भी संगम कविताओं में पर्याप्त रूप से उपलब्ध है जो इस शास्त्रीय (classical) काल में अस्तित्व में रही सामाजिक परिस्थितियों के विषय में मूल्यवान जानकारी उपलब्ध कराता है।

आर्थिक परिस्थितियाँ, जैसे आंतरिक व्यापार, रोम तथा अन्य देशों के साथ बाह्य व्यापार (जिसकी पुष्टि विदेशी साहित्यिक स्रोतों जैसे *पेरिप्लस ऑफ़ द एरीथ्रियन सी* तथा टॉलेमी की कृति से भी होती है), उत्पादन की प्रक्रिया, वस्तु विनिमय, विभिन्न व्यवसायों/उद्योगों/उपजीविकाओं का भी इन कविताओं में उल्लेख है। चेरों के बंदरगाह-नगर मुज़िरिस में समुद्र से आने वाले रोम के स्वर्ण के बदले ले जाए जाने वाली काली मिर्च के ढेर पड़े होने का उल्लेख मिलता है (अकनानुरु 149, पुरनानुरु 343)।

बोध प्रश्न-3

- 1) संगम साहित्य में ऐतिहासिक विवरण किस प्रकार दर्ज हुए हैं?

.....

.....

.....

- 2) संगम साहित्य में जिस प्रकार युद्धक्षेत्र की समझ का उल्लेख हुआ है उसका वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

- 3) संगम साहित्य में घटनाओं का सजीव वर्णन किस प्रकार हुआ है?

.....

.....

.....

7.4 रचना तथा संहिताकरण: इतिहास का निर्माण

संगम कवियों और उनकी रचनाओं को ऐतिहासिक चेतना के आधुनिक पैमाने पर नहीं मापा जा सकता है। इन शास्त्रीय कविताओं का अलग संदर्भ, अलग समयों तथा भिन्न स्थान-विशेषों में वाचन/गायन किया गया था। इन कविताओं का मध्यकाल में संहिताकरण तथा संशोधन हुआ।

संगम शब्द का प्रयोग ब्रज्जनंदी द्वारा जैन संघ के लिए किया गया था। आठवीं शताब्दी में इरेनार अकप्पोरुल द्वारा स्वयं भगवान शिव द्वारा रचित कही व मानी गई इन कृतियों का वर्तमान स्वरूप में संहिताकरण किया गया। पेरुतेवनार द्वारा संकलित किए जाने और कुछ संकलनों में वंदनीय पद्य जोड़े

जाने से पूर्व बेतरतीब (random) ढंग से कविताओं को संकलित व संहिताबद्ध किया गया और कुछ लोगों द्वारा इनमें पुष्पिकाएँ (colophones) जोड़ी गईं। बाद के काल में मौखिक परम्पराओं को अभिलिखित किया गया और कविताओं को उनकी शैली और विषयवस्तु के आधार पर श्रेणीबद्ध किया गया।

7.5 अतीत का प्रमाणीकरण: संगम युग की ऐतिहासिकता

संगम रचनाओं तथा संगमकालीन शासकों को समकालीन और बाद के समय की कृतियों में स्थान दिया गया है। दिलचस्प रूप से *रामायण* में कावट नगर का उल्लेख आता है जो अपने मोतियों के लिए विख्यात था और पांड्य शासकों द्वारा शासित था।

कौटिल्य के *अर्थशास्त्र* में भी पांड्य कावट के मोतियों का संदर्भ मिलता है। अशोक का तेरहवाँ शिलालेख दक्षिणी पड़ोसियों के रूप में चेरों, चोलों, पांड्यों और सत्यपुत्रों का उल्लेख करता है। सत्यपुत्रों की पहचान जंबई में प्राप्त तमिल ब्राह्मी अभिलेख के आधार पर तगादुर क्षेत्र (आधुनिक समय में पश्चिमी तमिलनाडु का धरमपुरी क्षेत्र) के अधियमान वंश से की गई है। इस अभिलेख, जिसकी तिथि लगभग पहली शताब्दी सी ई मानी गई है, में उद्धृत है, 'सतियपुथो अधिय नेडुमनंजी ईथा पाली'। इसमें दर्ज है कि सत्यपुत्र अधियमान ने जैन भिक्षु हेतु पाषाण शय्या का दान किया। अशोक का अभिलेख संगम कविताओं की ऐतिहासिकता सिद्ध करने की युक्ति के रूप में लिया जा सकता है।

राजा खारवेल का हाथीगुम्फा अभिलेख इस राजा की 113 वर्ष से अस्तित्व में रहे द्रामिड़ संघ पर विजय का उल्लेख करता है। इसमें यह भी वर्णन है कि पांड्य राजा ने घोड़ों तथा हाथियों के साथ-साथ मोती तथा अन्य रत्नों की भेंट लाकर खारवेल का सम्मान किया।

दूसरी शताब्दी सी ई में तिथिबद्ध किया गया तथा तमिल-ब्राह्मी में लिखित पुगलुर अभिलेख चेर वंश के तीन राजाओं का उल्लेख करता है। इसमें को आधन सेल्लीरुमपोरई, उसके पुत्र पेरुंकडुंको तथा उसके पुत्र इलांकडुंको का उल्लेख है जिन्होंने एक जैन शय्या का दान किया। इन तीन शासकों का उल्लेख संगम काव्य *पतित्रुपाथु/पथित्रुपथु* में सातवें, आठवें तथा नौवें राजाओं के रूप में उल्लेख है।

नेडुनचडायन के वेल्विकुडि ताम्रपत्रों (नौवीं शताब्दी सी ई) में एक ब्राह्मण नरकोरन को वेल्विकुडि ग्राम के दान का उल्लेख है जिसने इस राजा के पूर्वज पालयग मुदुकुडुमी पेरुवलुथी के लिए वैदिक यज्ञ का निष्पादन किया था। यह तमिल क्षेत्र में ब्रह्मदेय का प्राचीनतम साक्ष्य हो सकता है। लेकिन, कलाभ्रों ने इस क्षेत्र में अधिकार कर लिया और यह भू-दान अमान्य हो गया। कडुनकोन के नेतृत्व में पांड्यों के पुनः उदय के साथ कलाभ्रों की पराजय हुई। पांड्य राजा नेडुनचडायन के तृतीय राज्यवर्ष में एक ब्राह्मण, जो नरकोरन का वंशज था, राजा के पास आया और उसे वह भू-दान वापस लौटाने की याचना की। राजा ने यह ग्राम उस ग्राम के मुखिया और 50 ब्राह्मणों के बीच पुनर्वितरित किया। वेल्विकुडि ताम्रपत्र इस ऐतिहासिक घटना की निरंतरता को प्रकट करते हैं और साथ ही साहित्यिक संदर्भों को प्रमाणित भी करते हैं।

वह नक्कीरन था जिसने इरैनार अकप्पोरुल पर भाष्य लिखा था। यह कृति वर्णन करती है कि ये गीत मुशिरी के नीलकंठन के समय, जिसकी तिथि का निर्धारण आठवीं शताब्दी सी ई में किया जा सकता है, तक 10 पीढ़ियों से मौखिक रूप से हस्तांतरित हुए थे।

हमारे पास संगम काल के लिए अभिलेखीय संदर्भ हैं जिनके विषय में रामनाथपुरम के 829 सी ई में तिथि-अंकित एरुक्कनकुटी अभिलेख से पता चलता है। यह अभिलेख एक संगम परिषद् के आसन का संदर्भ देता है जिस पर तमिल कृतियों के वजन को तोला गया था और किसी एडिचट्टन का उल्लेख भी मिलता है जो उस संगम के आसन पर विराजमान था।

क्रमशः 10वीं तथा 11वीं शताब्दी के चिन्नामनुर और तलवयपुरम अभिलेखों में पांड्य राजाओं द्वारा संरक्षित मदुरै के संगम परिषद् का उल्लेख मिलता है। पांड्य साम्राज्य, जो कलाभ्र शासकों की पराजय तथा राजा कडुनकोन के उदय के साथ अस्तित्व में आया था, ने अपने शासन को वैधता प्रदान करने के लिए अपनी वंशावली को पुनर्स्थापित करने हेतु सम्भवतः संगम के नाम का उपयोग किया।

संगम काल के लिए विदेशी स्रोत

संगम काल रोमन संसार के साथ अपने समृद्ध आर्थिक संबंधों के लिए जाना जाता है। संगम कविताएँ यवनों (विदेशियों) द्वारा संचालित जहाजों का उल्लेख करती हैं जो स्वर्ण लेकर आते थे और तमिल तटीय क्षेत्रों से काली मिर्च ले जाते थे (अकनानुरु 149)। मिस्र के बेरेनिस (Berenice) से प्राप्त काली मिर्च इस व्यापार के काव्यात्मक वर्णन की पुष्टि करती है। एक मृद्भांड पर उद्धृत तमिल ब्राह्मी अभिलेख में आए कोटरापूमन (Kotrapooman) नाम से तमिल क्षेत्र के व्यापारियों की मिस्र तथा रोम के साथ व्यापार के इस तंत्र में भागीदारी का पता चलता है।

यह तथ्य कि तटीय नगर आयात तथा निर्यात के उद्देश्य से लायी गई पण्य-वस्तुओं से गुलज़ार रहते थे संगम कविताओं तथा पुरातात्विक स्रोतों, दोनों, से अभिपुष्ट होता है। कुसैर-अल-कादिम (लाल सागर पर स्थित; अरब भूगोलवेत्ताओं द्वारा वर्णित कुस तथा रोमनों का मायोस होरमोस) के बंदरगाह-स्थल से तमिल ब्राह्मी अभिलेख प्राप्त हुए हैं जिनमें साधन और कनन/कानन नाम हैं जो विदेशों से होने वाले व्यापार के संबंध में संगम कविताओं से प्राप्त जानकारी को और मज़बूत बनाते हैं।

संगम साहित्य में उद्धृत स्थलों का संदर्भ यूनानी-रोमन साहित्य में मिलता है, जैसे स्ट्रैबो की ज्योग्राफी, पेरिप्लस ऑफ़ एरेथियन सी, प्लिनी की नेचुरल हिस्ट्री, टॉलेमी की ज्योग्राफी तथा प्यूटिंगर टेबल (Peutinger Table)। उदाहरणार्थ, वीराई मुंथुराई (जिसकी पहचान अरिकामेडु-वीरमपट्टिनम से की गई है) का संदर्भ विदेशी साहित्य में पोडुके के रूप में मिलता है। पांड्यों के बंदरगाह-नगर कोरकाई का उल्लेख कोल्वि और कोलखई (Kolkhai) के रूप में उल्लिखित है। चोलों की राजधानी उरैयूर की पहचान अर्गारु से की गई है।

रोमनों के साथ व्यापार का तमिलनाडु तथा केरल के कई पुरातात्विक स्थलों, जैसे अरिकामेडु, अलगनकुलम, कोरकाई, कावेरीपट्टिनम तथा पट्टनम, के उत्खनन से भी पता चलता है। इस प्रकार संगम साहित्य में उल्लिखित ऐतिहासिक तथ्यों की पुष्टि होती है।

निष्कर्ष रूप में, हमें चारणों तथा कवियों द्वारा रचे गए गीत उपलब्ध हैं जिन्होंने उनमें ज्ञात अतीत और समकालीन, दोनों, घटनाओं को दर्ज किया जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित हुईं जिनमें उन मध्यकालीन कवियों, जिन्हें इन कविताओं का कुछ ऐतिहासिक संदर्भ याद था (जहाँ साक्ष्य नहीं थे, वहाँ उन्होंने इन्हें गढ़ा), ने नई रचनाओं और पुष्पिकाओं को जोड़ा, भाष्यों को जोड़ा, चुने हुए संकलनों और कृतियों में श्रेणीबद्ध किया, तमिल क्षेत्र के विभिन्न स्थानों में इन्हें सुरक्षित रखा और अंततः यू. वी. स्वामीनाथ अय्यर के प्रयासों से इनका प्रकाशन हुआ। इस प्रकार इस विपुल साहित्य भंडार के सृजन की परम्परा व्यापक काल, सम्भवतः द्वितीय/प्रथम शताब्दी बी सी ई से 19वीं शताब्दी सी ई तक, में विस्तृत है।

यद्यपि इन कविताओं का कालक्रम संयोजनों, क्षेपकों तथा संशोधनों के जाल में उलझा हुआ है, संगम कविताओं के विषय, अंतर्वस्तु तथा इतिहास, सायास या अनायास रूप से, अतीत की कुछ निश्चित घटनाओं को दर्ज करते हैं जो तमिलों के आज से 2300 वर्ष पूर्व से 1200 वर्ष पूर्व के इतिहास पर प्रकाश डालते हैं।

7.6 ऐतिहासिक परम्पराओं में निहित विरासत

जिन तमिल कवियों ने इन कविताओं की रचना की उनकी ऐतिहासिक चेतना अतीत की घटनाओं को सामूहिक स्मृति के रूप में सुरक्षित रखती है। अपने अतीत को चिह्नित करना और इस विरासत को वैयक्तिक या सामूहिक स्मृति के रूप में सुरक्षित रखना ऐतिहासिक चेतना के निर्माण में प्रमुख भूमिका निभाता है। निश्चित रूप से इसमें अतीत की स्मृति तथा समकालीन समय में वैधता के लिए उसके उपयोग के बीच अंतःक्रिया होती है। यद्यपि यह जानना भी आवश्यक है कि क्यों अतीत के कुछ निश्चित पहलू संरक्षित किए जाते हैं और लोगों की ऐतिहासिक चेतना में बने रहते हैं और क्यों कुछ को महत्व नहीं दिया जाता है। अतीत की कुछ निश्चित घटनाओं को शामिल करना और कुछ को छोड़ देना यह किसके निर्णय या विवेक पर आधारित था? क्यों केवल कुछ ही पहलू एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तांतरित हुए? संगम काल के कवियों ने कुछ निश्चित घटनाओं का ही

वर्णन क्यों किया, उनका क्या इरादा था? क्या इन कविताओं को कवियों द्वारा अपने स्वामियों को प्रसन्न करने के लिए सहसा निकल आए भावनात्मक उद्गारों के रूप में श्रेणीबद्ध किया जा सकता है? क्यों विचारों की कुछ सामान्य अभिव्यक्तियों में मिथकीय कहानियाँ बुन दी जाती थीं?

इसका उत्तर किसी के पास उपलब्ध शक्ति तथा संसाधन पर निर्भर करता है। ऐतिहासिक चेतना या सामूहिक स्मृति शक्तिशाली लोगों के एक वर्ग को पहचान प्रदान करती है जिसने अपने लाभ हेतु संसाधनों को लामबंद (mobilise) किया होता है या गतिशील बनाया होता है। समय के साथ-साथ संभवतः सामूहिक स्मृति अतीत के वर्णनों में जुड़ जाती है और समकालीन तथा बाद के समय की ऐतिहासिक परम्पराओं में स्थान बना लेती है।

अतीत-संबंधी मिथकों और ऐतिहासिक स्मृतियों, जो किसी समाज की ऐतिहासिक चेतना का निर्माण करती हैं, का संगम काल के कवियों द्वारा संभवतः अपने संरक्षणदाताओं की आवश्यकताओं के हिसाब से उपयोग किया गया जिन्हें अपनी सत्ता और शक्ति के लिए वैधता की आवश्यकता थी। इस ऐतिहासिक परम्परा के साथ ही ऐतिहासिक वर्णन इतिहास के एक अंश का निर्माण करते हैं जिसको साहित्य में गौरवशाली रूप से प्रस्तुत किया जाता है। अपनी विविधतापूर्ण अंतर्वस्तु के साथ संगम साहित्य न केवल उन ऐतिहासिक परम्पराओं को सामने लाता है जो इन कविताओं के संकलन से पूर्व अस्तित्व में रही थीं बल्कि साथ ही एक नए ऐतिहासिक आख्यान को भी गढ़ता है जिसने तमिल क्षेत्र के इतिहास का आधार तैयार किया था।

बोध प्रश्न-4

- 1) क्या संगम साहित्य को इतिहास-निर्माण में सहायक कहा जाना उचित है?
.....
.....
.....
.....
- 2) संगम साहित्य में मौजूद ऐतिहासिक चेतना का उल्लेख कीजिए।
.....
.....
.....
.....
- 3) संगम साहित्य में विदेशियों की उपस्थिति को निरूपित करने वाले कौन से संदर्भ मिलते हैं?
.....
.....
.....
.....
- 4) क्या संगम कविताओं को मुखियाओं को प्रसन्न करने वाली कविताओं के रूप में श्रेणीबद्ध किया जा सकता है?
.....
.....
.....
.....
- 5) संगम साहित्य में मिथकीय कहानियाँ विचारों की सामान्य अभिव्यक्ति में क्यों गुथी हुई हैं?
.....
.....
.....
.....

7.7 सारांश

इस इकाई में आपने *अकम* तथा *पुरम* विषय-वस्तुओं के रूप में संगम साहित्य के विषय में पढ़ा है जो अतीत की घटनाओं के साथ-साथ समकालिक प्रसंगों का वर्णन करता है। ये गीत न केवल तमिल क्षेत्र के आरम्भिक इतिहास की पुनर्रचना हेतु स्रोत उपलब्ध कराते हैं बल्कि उन घटनाओं को भी दर्ज करते हैं जो अतीत में घटित हुई थीं। समकालीन घटना-प्रसंगों के साथ प्राचीन तमिलों के अतीत का इतिहास मौखिक परम्पराओं में दर्ज होता रहा और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तांतरित होता रहा। ये कविताएँ ऐतिहासिक घटनाओं को दर्ज करने के उद्देश्य से नहीं रची गई हैं। ये *अकम* तथा *पुरम* के संदर्भ में भावों को अभिव्यक्त करने के उद्देश्य से लिखी गईं। इन ग्रंथों में ऐतिहासिक घटनाएँ सामान्य ढंग से गुथी हुई हैं और अंततः हमारे पास ऐसे काव्य-संकलन हैं जो अतीत की ऐसी ऐतिहासिक चेतना का संकेत करते हैं जो वर्तमान में भी अनवरत बनी रहती है।

7.8 शब्दावली

चेर

चेर (लगभग दूसरी शताब्दी बी सी ई-तीसरी शताब्दी सी ई) तमिल क्षेत्र के आरम्भिक ऐतिहासिक काल की तीन मुख्य शक्तियों (मुवेंतार) में से थे। उनकी शक्ति के प्रमुख केंद्र करूर (तमिलनाडु) तथा मुज़िरिस व थोंदि (Thondi; केरल) थे।

चोल

प्रारम्भिक चोलों ने तमिलनाडु के राज्यक्षेत्र में संगम काल से पूर्व तथा संगमोत्तर काल (लगभग 600 बी सी ई-300 सी ई) में शासन किया था। उनकी शुरुआती राजधानियाँ उरैयूर/उरयूर (तिरुचिरापल्ली) तथा कावेरीपट्टिनम थीं। आरम्भिक चेरों, चोलों तथा पांड्यों का उल्लेख अशोक के अभिलेखों (दूसरा और 13वाँ शिलालेख) में हुआ है। आरम्भिक चोलों में करिकाल चोल सबसे प्रमुख था जिसका कई संगम रचनाओं में उल्लेख मिलता था।

पांड्य

प्रारम्भिक पांड्यों की राजधानी कोरकाई थुथुकुडी थी जो बाद के समय में नेदुनजेलियन के काल में कूडल (मदुरै) स्थानांतरित हुई। संगम साहित्यिक कृतियों — *मदुरैकांची* तथा *शिलपदिदकारम* — में आरम्भिक पांड्यों का उल्लेख किया गया है। पांड्यों का प्रभाव क्षेत्र पश्चिम में त्रावणकोर तथा उत्तर में वेल्लारु नदी के बीच था जबकि पूर्व तथा दक्षिण में समुद्र इसकी सीमा का निर्धारण करता था। आरम्भिक पांड्यों तथा कोरकाई (Korkai) (प्रमुख समुद्री क्षेत्र) का उल्लेख प्लिनी, स्ट्रैबो तथा टॉलेमी के यूनानी विवरणों में मिलता है। पांड्य राज्यक्षेत्र मत्स्यन और मोतियों के लिए भी विख्यात था।

7.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

- 1) देखें भाग 7.2
- 2) देखें भाग 7.2
- 3) देखें भाग 7.2

बोध प्रश्न-2

- 1) देखें भाग 7.3
- 2) देखें उप-भाग 7.3.1

- 3) देखें उप-भाग 7.3.1
- 4) देखें उप-भाग 7.3.1

बोध प्रश्न-3

- 1) देखें उप-भाग 7.3.2
- 2) देखें उप-भाग 7.3.2
- 3) देखें उप-भाग 7.3.2

बोध प्रश्न-4

- 1) देखें भाग 7.4
- 2) देखें भाग 7.5
- 3) देखें भाग 7.5
- 4) देखें भाग 7.6
- 5) देखें भाग 7.6

7.10 संदर्भ ग्रंथ

- चेल्लया, जे. वी., (1946) पथ्युपट्टु (कोलम्बो: जनरल पब्लिकेशन).
- हार्ट, ज्योर्ज एल., (1975) द पोयम्स ऑफ़ एनशियंट तमिल्स: देयर मिलिउ एंड देयर संस्कृत काउंटरपाटर्स (बर्कली: यूनिवर्सिटी ऑफ़ कैलिफ़ोर्निया प्रेस).
- हार्ट, ज्योर्ज एल., (1975) 'एंशियंट तमिल लिट्रेचर: इट्स स्कॉलर्ली पास्ट एंड फ्यूचर', स्टाइन बी., (संपा.) एसेज़ ऑन साउथ इंडिया (हवाई: एशियन स्टडीज़ प्रोग्राम: यूनिवर्सिटी ऑफ़ हवाई), पृ. 41-63.
- हार्ट, ज्योर्ज एल., एवं हेटज, हैंक, (1999) द फ़ोर हंड्रेड सोंग्स ऑफ़ वार एंड विज़्डम: एन एंथोलॉजी ऑफ़ पोयम्स फ़्रॉम क्लासिकल तमिल, द पुरनानुरु (न्यूयार्क: कोलम्बिया यूनिवर्सिटी प्रेस).
- कैलासपथि, के., (1968) तमिल हेरोइक पोयट्री (लंदन: ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).
- महादेवन, आई., (2003) अर्ली तमिल इपिग्राफी: रोम द अर्लीयस्ट टाइम्ज़ टू द सिक्स्थ सेंचरी ए. डी. (चेन्नई: हावर्ड यूनिवर्सिटी).
- राजेश, वी., (2006-07) 'द मेकिंग ऑफ़ तमिल लिटरेरी कैनन', प्रोसीडिंग्स ऑफ़ द इंडियन हिस्ट्री कांग्रेस, 67वां सत्र, पृ. 153-161.
- रामानुजन, ए. के., (1967) इंटिरीयर लैंडस्केप: लव पोयम्स फ़्रॉम अ क्लासिकल तमिल एंथोलॉजी, (ब्लूमिंगटन: इंडियाना यूनिवर्सिटी).
- रामानुजन, ए. के., (1985) पोयम्स ऑफ़ लव एंड वार (न्यूयार्क: कोलम्बिया यूनिवर्सिटी).
- शेषा अय्यर, एस. जी., (1937) चेर किंग्स ऑफ़ द संगम पीरियड (लंदन: लुजाक एंड कम्पनी).
- सिवराजपिल्लै, के. एन., (1932) द क्रोनोलॉजी ऑफ़ अर्ली तमिल्स (मद्रास: द यूनिवर्सिटी ऑफ़ मद्रास प्रेस).
- सिवथम्बी, के., (1974) 'अर्ली साउथ इंडियन सोसायटी एंड इकॉनमी: द तिनै कॉन्सेप्ट', सोशल साइंटिस्ट, भाग 29, पृ. 20-37.
- सुब्रमणियन, एन., (1966) संगम पॉलिटी (लंदन: एशिया पब्लिशिंग हाउस).
- थापर, आर., (2013) द पास्ट बिफ़ोर अस: हिस्टोरिकल ट्रडिंज ऑफ़ अर्ली नॉर्थ इंडिया (हार्वर्ड: हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

टिकेन एच., (2003) 'ओल्ड तमिल संकम लिटरेचर एंड द सो कॉल्ड संकम पीरियड', *इंडियन एकनॉमिक एन्ड सोशल हिस्ट्री रिव्यू*, भाग 40, पृ. 247-278.

वैयापुरी पिल्लै, एस., (1956) *हिस्ट्री ऑफ तमिल लैंग्विज एंड लिटरेचर* (मद्रास: न्यू सेंचरी बुक हाउस).

ज्वेलेबिल, के.वी., (1973) *द स्माइल ऑफ मुरुगन* (लीडन: ई. जे. ब्रिल).

ज्वेलेबिल, के.वी., (1975) *तमिल लिटरेचर* (वीज़बाडन: ओट्टो हरसोविट्ज).

7.11 शैक्षणिक वीडियो

क्लासिकल लिटेरेचर – अतिकल्ज़ चिलप्पतिकारम

<https://www.youtube.com/watch?v=KGIZnCr1sUU>

अर्ली तमिल सोसाइटी, लिटेरेचर, ऐपिग्राफी एंड आर्कियोलॉजी

<https://www.youtube.com/watch?v=kvcv-bD2rjY>

संगमएज

<https://www.youtube.com/watch?v=RuyF-t96yNY>

अंडरस्टैंडिंग थोलक्कापियम

<https://www.youtube.com/watch?v=zWg7bRgTWTo>

इकाई 8 आमुक्तमाल्यद तथा रायवाचकमु*

इकाई की रूपरेखा

- 8.0 उद्देश्य
- 8.1 प्रस्तावना
- 8.2 तथ्यात्मक विवेचना तथा बदलती पद्धति
- 8.3 इतिहास, साहित्य तथा ग्रंथ
- 8.4 आमुक्तमाल्यद
- 8.5 आमुक्तमाल्यद ग्रंथ की ऐतिहासिक महत्ता
 - 8.5.1 श्रीनिवास रेड्डी की गिवर ऑफ़ द वॉर्न गार्लैंड
 - 8.5.2 श्रीनिवास रेड्डी द्वारा आमुक्तमाल्यद का विश्लेषण
 - 8.5.3 कुछ उद्धरण
 - 8.5.4 कुछ दृष्टिकोण
- 8.6 रायवाचकमु (राजा के विवेकपूर्ण संवाद)
- 8.7 रायवाचकमु का ग्रंथीय स्वरूप
- 8.8 सिंहावलोकन
- 8.9 सारांश
- 8.10 शब्दावली
- 8.11 बोध प्रश्नों के उत्तर
- 8.12 संदर्भ ग्रंथ
- 8.13 शैक्षणिक वीडियो

8.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- इन ग्रंथों और ऐतिहासिक पद्धतियों के बीच संबंध का मूल्यांकन कर पाएँगे,
- इन ग्रंथों के पाठ की शैली को ग्रहण कर पाएँगे,
- साहित्य तथा इतिहास के बीच संबंध को समझ पाएँगे,
- इन ग्रंथों को उनके ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में रख पाएँगे,
- यह विश्लेषण कर पाएँगे कि किस प्रकार समय के साथ तथ्यों की विवेचना में बदलाव आता है,
- किसी ग्रंथ के ऐतिहासिक महत्व को आँकने में सक्षम हो पाएँगे,
- विजयनगर साम्राज्य के इतिहास को समझने में आमुक्तमाल्यद के महत्व का परीक्षण कर पाएँगे, और
- विजयनगर और नायक-शासकों के बीच संबंध को समझने में रायवाचकमु के महत्व को जान पाएँगे।

8.1 प्रस्तावना

रोमिला थापर यह प्रश्न उठाती हैं, ‘क्या प्रारम्भिक भारत में ऐतिहासिक लेखन अस्तित्व में रहा है?’ यह प्राचीन भारत के लिए जितना प्रासंगिक है, उतना ही मध्यकालीन भारत के लिए भी। यह सामान्य

* प्रो. टी. के. वेंकट सुब्रह्मण्यम, इतिहास विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

मिथ्यारोपण कि भारत में इतिहास-बोध का अभाव था, इस यूरोपीय पूर्वधारणा के कारण था कि भारत प्राच्य निरंकुशतावाद के अधीन एक गतिहीन समाज था, और कुछ हद तक इसका कारण प्रारम्भिक बौद्ध, जैन तथा पौराणिक साहित्य में प्राच्यवादी विद्वानों की रुचि भी था। हाल के वर्षों में, पश्चिमी तथा इस्लामी विश्व में भी विभिन्न प्रकार के इतिहास लेखन हमारे सम्मुख आए हैं। थापर ने यह नई अन्तर्दृष्टि दी है कि ऐतिहासिक चेतना विभिन्न प्रकार के ग्रंथों में अंतर्बद्ध थी, और लेखन की कई ऐसी विधाएँ विकसित हुईं जिनमें यह चेतना आकार ग्रहण करती थी। ऋग्वेद की **दानस्तुति** ऋचाओं का इस संदर्भ में उदाहरण दिया गया है, जिनमें किसी प्रमुख/मुखिया की युद्ध में सफलता का यशोगान करने वाले कवि पर प्रकट की गई अनुकम्पा का उल्लेख किया गया है।

गुप्त काल से हमें **चरित**, **वंशावली** तथा **प्रशस्ति** जैसी नई शैलियाँ देखने को मिलती हैं। थापर के अनुसार, ऐतिहासिक चेतना राज्य व्यवस्था की जटिलता में हो रही वृद्धि में पूर्ण रूप से सन्निहित हो गई थी तथा उसके समानांतर विकसित हुई। बौद्ध तथा जैन लेखकों के ऐतिहासिक दृष्टिकोणों के साथ ही ये प्रारम्भिक भारत में अतीत को कैसे देखा जाता था इस पर पर्याप्त सूचना उपलब्ध कराती हैं। थापर कहती हैं, ‘मेरा सरोकार, इस प्रकार, इस बात से कम है कि क्या भारतीय समाज ने अतीत के संबंध में परंपरागत किस्म का पाठांकन करने वाला कोई विशेष ऐतिहासिक साहित्य रचा था या नहीं, बल्कि उन विभिन्न प्रकार के ग्रंथों को समझने के प्रयास से है जिनका मंतव्य अतीत का निरूपण करना था’।

वेलचेरु नारायण राव, डेविड शुलमैन तथा संजय सुब्रह्मण्यम भी इसी प्रकार के प्रश्न उठाते हैं, ‘क्या अठारहवीं शताब्दी के आखिर में इस क्षेत्र पर ब्रिटिश विजय से पूर्व दक्षिण भारत में ऐतिहासिक चेतना का अस्तित्व था?’ वे यह भी स्पष्ट करते हैं कि उनकी कृति **टेक्सचर्स ऑफ़ टाइम** की परिकल्पना इस मत, कि इतिहास यहाँ के लिए एक ‘अजनबी’ विचार रहा है, का खंडन करने के लिए की गई थी। इस कृति के अध्याय समाज की अतीत की दृष्टि तथा समझ के संबंध में सोलहवीं, सत्रहवीं तथा अठारहवीं शताब्दी के दक्षिण भारत का अन्वेषण करते हैं। इस पुस्तक में उनका तर्क है कि तेलुगु, तमिल, संस्कृत, मराठी तथा फ़ारसी में लिखित ग्रंथ परंपरागत दृष्टि से बंधे पर्यवेक्षक को इतिहास की तरह प्रतीत नहीं हुए होंगे, किंतु ये दर्शाते हैं कि इतिहास कई तरह की शैलियों में लिखा जाता है। इस ग्रंथ में अध्ययन के लिए उन्होंने **रायवाचकमु** को लिया है, जिसे इन इतिहासकारों ने **करणम्** तथा **राजा** कहा है। वे दावा करते हैं कि, ‘हमने तेलुगु, तमिल, मराठी तथा फ़ारसी में उपलब्ध समृद्ध सामग्री का नमूना भर उपलब्ध कराया है। हमने इन ग्रंथों को कई सम्भावित कसौटियों के आधार पर श्रेणीबद्ध करने का प्रयास भी किया है – कार्य-कारण के उनके विचार, इतिहासलेखन के उद्यम को सूत्रबद्ध करने का उनका ढंग, कभी-कभी उनकी प्रतिस्पर्धी सामयिक पद्धतियाँ, और भी अन्य तत्व।’ अध्येताओं को इस पुस्तक के शीर्षक में प्रयुक्त ‘टेक्सचर’ (texture; बनावट/विन्यास) शब्द पर ध्यान देना चाहिए। ‘टेक्सचर’, उस व्यवस्था में जिसमें इतिहास किसी एक शैली के रूप में क्रिस्टलीकृत नहीं हुआ था, शैली, रूप तथा संरचना पर किए गए पुराने आग्रह का एक विकल्प है। ‘टेक्सचर’, अभिव्यक्त यथार्थ की प्रकृति के विषय में सुदृढ़ अभिकथन भी है।

8.2 तथ्यात्मक विवेचना तथा बदलती पद्धति

इतिहास के छात्र, 1960 के दशक में ऐतिहासिक पद्धति से परिचय हेतु ई. एच. कार की **व्हाट इज़ हिस्ट्री?** पढ़ते थे। अगले दो दशकों तक यही पुस्तक संदर्भ ग्रंथ बन गई, यह दर्शाने के लिए कि अब किस तरह से इतिहास भिन्न तरह से लिखा जा रहा था। 1970 तथा 1980 के दशक में, इसने ‘सामाजिक’ तथा ‘आर्थिक’ इतिहास का रूप लिया। ब्रिटिश ‘सामाजिक इतिहास’ ई. पी. थॉम्पसन की परिभाषा या फ़्रांसीसी **अनाल्स (Annales)** के चारों ओर विकसित हुआ, जिसने समाजों के इतिहास के अध्ययन हेतु वैज्ञानिक तथा गैर-विचारधारात्मक पद्धति को विकसित करने का दावा किया। **अनाल्स** इतिहासलेखन का प्रत्यक्षतः भारत में कोई अनुयायी नहीं था। कार ने ‘व्याख्या’ का अपना विचार आर. जी. कॉलिंगवुड से ग्रहण किया था तथा कॉलिंगवुड ने इसे डिल्थे तथा क्रोस जैसे दार्शनिकों से ग्रहण किया था।

इतिहास के अनुशीलन में, चूँकि हर कुछ एक ‘व्याख्या’ थी, अतः एक व्यक्ति की आत्मनिष्ठ समझ उतनी ही सही थी जितनी कि दूसरे की। इतिहासकारों ने व्याख्या के ऊपर तथ्य की प्राथमिकता के अपुष्ट सिद्धांतों से, और इसके उलट अपना मार्ग बनाना सीखा। यह अनुभव किया गया कि

ऐतिहासिक तथ्य (विज्ञान के तथ्यों की तरह) अपने निर्मित इतिहास के सापेक्ष थे। दूसरे शब्दों में, सभी ज्ञान सामाजिक रूप से रचा गया था, और इस अर्थ में, समाज-सापेक्ष था। ई. एच. कार ने कार्ल मैनीम द्वारा विकसित 'ज्ञान के समाजशास्त्र' से इस विचार को लिया था।

भारत में इतिहास लेखन द्वारा पेशेवर रूप धारण करने की प्रक्रिया के तहत इतिहास लिखा जाना अभी शेष है। इतिहास लेखन के सम्पूर्ण क्षेत्र का रूपांतरण होना अभी बाकी है। पुरानी पद्धति पर लिखे गए इतिहास को विचारधारा को अध्ययन का विषय बनाने में कोई समस्या नहीं थी, किंतु नए इतिहास का यह आग्रह रहेगा कि वह कोई विचारधारा को नहीं रच रही है। विचारधारा इतिहास लेखन के उत्पाद से लुप्त होती जाएगी, लेकिन शायद इतिहासलेखन की पूर्वधारणा के रूप में इसके सृजन में शायद इसका पुनः उदय हो।

ये रोलॉ बार्थ थे, जिन्होंने 1967 में इतिहास लेखन के साहित्य से भिन्न होने के दावे के विरुद्ध शुरुआती संघर्ष छेड़ा। एक विवाद के रूप में इतिहास के दर्जे के संबंध में एक पूर्ण संघर्ष विकसित हुआ।

क्या अतीत की घटनाओं का वर्णन, जिसे हमारी संस्कृति में यूनानियों के काल से ही सामान्यतः ऐतिहासिक 'विज्ञान' के अंतर्गत स्वीकृत किया गया है, 'यथार्थ' के अंतर्निहित मानक से बंधा है और 'तर्कपूर्ण' प्रवृत्ति के सिद्धांत से यह वैध ठहरता है — क्या इस प्रकार का वर्णन वास्तव में, किसी विशेष लक्षण में, किसी सुनिश्चित विशिष्ट गुण में, उस कल्पनापूर्ण वर्णन से भिन्न है जो हमें महाकाव्यों, उपन्यासों तथा नाटकों में मिलता है।

जॉन्सन, 1981

बार्थ का कहना है कि तथ्यों को वर्णनात्मक कथानक में बुनते हुए, इतिहासकार अतीत के संबंध में मात्र सूचना उपलब्ध कराने से कुछ अधिक कर रहे थे। वास्तविक अतीत के संबंध में तथ्य इतिवृत्तों में मिल सकते हैं, इतिहासकार इन तथ्यों को पुनः प्रस्तुत नहीं करते हैं बल्कि इनको एक ऐसे आख्यान में गूँथते हैं जो अर्थपूर्ण होता है तथा अर्थों को गढ़ना पड़ता है, वे दिए गए नहीं होते हैं। अतीत का आख्यान पेश कर इतिहासकार विचारधारा के निर्माण में भागीदारी करते हैं, तथ्यों की विचारधारा पर आधारित एक व्याख्या, जो काल्पनिक होती है। यह सुझाया जा सकता है कि विज्ञान होने का भ्रम त्याग देना चाहिए तथा यह स्वीकारना चाहिए कि इतिहासकार, एक कवि या उपन्यासकार की तरह भाषा के शिल्प से संबंध रखता है। 1973 में हेडेन व्हाइट ने *मेटाहिस्ट्री* तथा इसके बाद *ट्रापिक्स ऑफ डिस्कोर्स* का प्रकाशन किया, जिसमें उन्होंने तर्क दिया कि ऐतिहासिक लेखन यथार्थ का प्रभाव अतीत के तथ्यों को सामने लाकर पैदा नहीं करते हैं बल्कि साहित्यिक लेखन में लम्बे समय से प्रचलित शब्द-चमत्कार के विधान का उपयोग कर करते हैं।

इतिहास के अनुशीलन की इस बदलती प्रकृति की पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए, अतीत की विवादास्पद प्रकृति के कारणों तथा विभिन्न प्रकार से किए गए अतीत के उपयोग को आसानी से समझा जा सकता है। फ़रिश्ता की *तारीख़* को 'मुस्लिम काल' के दो अलहदा विवरणों को लिखने हेतु प्रयोग में लाया जा सकता है। आर्य/द्राविड़ भाषायी विभाजन का सिद्धांत नस्लीय द्विभाजन में रूपांतरित किया जा रहा है। अतीत स्वयं को बहुविध रूपों में अभिव्यक्त करने हेतु प्रस्तुत करता है, और सामाजिक तथा राजनीतिक पहचानों को गढ़ने हेतु उपयोगी संसाधन बन चुका है। ये सभी अतीत का निर्धारण करने में इतिहासकार की भूमिका के विषय में प्रश्न खड़ा करते हैं।

8.3 इतिहास, साहित्य तथा ग्रंथ

इतिहास लेखन की परम्परा को हेरोडोटस तथा थ्यूसीडाइडीज़ के क्लास्सिकीय युग तक पीछे ले जाया जा सकता है। मध्यकाल में इतिहास ऐसे इतिवृत्तों से भरा था जो नातेदारी के संबंधों, ईसाई धर्म के संघर्षों तथा सफलताओं और सामंतों तथा राजाओं के बीच संघर्ष का वर्णन करते थे। संतों तथा शहीदों के प्रशस्तिपूर्ण जीवन-चरित भी महत्वपूर्ण थे। यह अठारहवीं शताब्दी में जाकर ही हुआ कि इतिहास एक अकादमिक विषय के रूप में उभरने लगा। इतिहासकार प्राथमिक स्रोतों के अध्ययन के प्रति जागरूक होने लगे। उन्नीसवीं शताब्दी में, इतिहास लेखन मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित हुआ। यह विषय *अनाल्स* अर्थात् बृहद् इतिहास की धारणा से और परिपक्व हुआ। इसकी आधी शताब्दी बाद, 'नवीन सामाजिक इतिहास', 'नवीन आर्थिक इतिहास' तथा 'नवीन राजनीतिक इतिहास' अस्तित्व में आए। 1970 के दशक से, उत्तर-आधुनिकतावाद के आगमन के बाद 'नव-नवीन इतिहासों' का उदय

हुआ। इस प्रवृत्ति ने क्लिफर्ड गीर्टज़, रॉबर्ट डरंटोन तथा स्टीफ़न ग्रीनब्लाट के कार्यों को प्रभावित किया।

‘नवीन सांस्कृतिक इतिहास’ के इतिहासकारों ने इस पर बल दिया है कि सांस्कृतिक विश्लेषण में ‘ससंदर्भ विवरण’ शामिल होता है, और लघु किंतु सघन विन्यास वाले तथ्यों से यह पद्धति व्यापक निष्कर्ष निकालने का प्रयास करती है। दूसरे शब्दों में, ‘अर्थों की कोई विशाल भूमि खोजने तथा इसके आकारहीन भू-दृश्यों का नक्शा तैयार करने पर दिए गए आवश्यकता से अधिक ध्यान के बजाय छोटी, वास्तविक समय में घटित घटनाओं पर व्याख्यापरक तथा नृशास्त्रीय ढंग से ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है’ (क्लिफर्ड गीर्टज़)। गीर्टज़ को जो आकर्षित करता है वह बुनावट है, न कि बुने जाने की प्रक्रिया, संस्कृति है न कि इतिहास, रचना है न कि रचनाबद्ध किए जाने की प्रक्रिया (लिन हंट)।

इस ‘नई संस्कृति’ को एक पाठ/रचना (text) की तरह देखा गया और इसकी व्याख्या पर जोर दिया गया। साहित्यिक ग्रंथों की व्याख्या के साथ ही सांस्कृतिक अध्ययन पर दिए जा रहे जोर को साथ में ‘नवीन इतिहासवाद’ के शीर्षक के अधीन रखा गया है। इस शब्द-व्यंजक का प्रथम उपयोग स्टीफ़न ग्रीनब्लाट द्वारा किया गया था जिन्होंने पुनर्जागरण कालीन निबंधों का एक संकलन इस शीर्षक के साथ सम्पादित किया था। इस प्रवृत्ति के अन्य विद्वान लुई मांट्रोज़ ने यह सुझाव दिया कि इस परियोजना के माध्यम से यह ‘अंतर-ग्रंथात्मकता की धुरी’ सांस्कृतिक व्यवस्था के एक पाठ में बदल जाती है। किसी ‘स्वतंत्र साहित्यिक इतिहास’ में रचे गए पाठ को एक ‘सांस्कृतिक व्यवस्था’ द्वारा गढ़े गए ‘पाठ’ के रूप में लिए जाने की आवश्यकता होती है। नवीन इतिहासवाद के अंतर्गत, साहित्य तथा ‘सांस्कृतिक व्यवस्था’ के बीच समकालिक संबंध, उनके बीच ‘समय के अनुरूप हुए परिवर्तन’ के पहलू की अपेक्षा अधिक प्राथमिक हो गए।

ग्रंथों को अक्सर दीर्घ स्वरूप के लेखन के रूप में देखा जाता है। विभिन्न प्रकार के ग्रंथ, अपने साहित्यिक गुणों के आधार पर ऐतिहासिक रूप से अपनी शैली को ग्रहण करते हैं। ‘शैली’ को ‘ग्रंथीय कौशल के आधारतल’ के रूप में देखा जाता है या अधिक परंपरागत रूप में ग्रंथीय श्रेणी के एक आधार के रूप में। आर. वोडक कई प्रकार के ग्रंथों को सूचीबद्ध करते हैं जैसे आख्यानात्मक ग्रंथ (कथा, कहानियाँ), तर्क-विवेचना के ग्रंथ (व्याख्यात्मक, वैज्ञानिक आलेख), विवरणात्मक ग्रंथ (वर्णन, चित्रण, इत्यादि) और निर्देशात्मक ग्रंथ (पाठ्य पुस्तकें)। प्रत्येक प्रकार का लेखन ऐतिहासिक अन्वेषण का विषय हो सकता है, एक श्रेणी के रूप में या पृथक् रूप से। सबका अपना एक इतिहास होता है वैसे ही जैसे उनके लेखकों, पाठकों तथा इतिहासकारों का होता है। पाठात्मक अध्ययन (textual studies) की स्वीकृति इतिहासकारों के बीच बढ़ती ही जा रही है। साहित्यिक उपागमों ने समकालीन इतिहास अनुशीलन को आकार दिया है, इस पर बारम्बार दिए गए बल का परिणाम साहित्य तथा इतिहास के संबंध की स्थापना में निकला है। साहित्य, इतिहास के उपयोगी स्रोत के रूप में काम आया है, किंतु इतिहास का लेखन उपन्यास तथा नाटकों के लेखन कार्य से बहुत भिन्न है। साहित्य निश्चित रूप से ऐतिहासिक परिवर्तनों तक पहुँच सम्भव बनाता है। इतिहासकार का कार्य अतीत का पुनर्निर्माण है तथा इसे सुतार्किक तरीके से संदर्भ प्रदान करना है। एक इतिहासकार को निश्चित रूप से किसी ग्रंथ की पृष्ठभूमि, अपने पाठकों के लिए उसके निहितार्थ का अध्ययन करना होगा और यह निर्धारित करना होगा कि क्या यह ग्रंथ बदलते समयों के लिए भी कोई महत्व धारण करता है।

इस इकाई में, हम दो तेलुगु ग्रंथों, *आमुक्तमाल्यद* तथा *रायवाचकमु* का अध्ययन करेंगे, इनमें से पहले ग्रंथ में हम लौकिक तथा दैवीय के बीच संबंध का अन्वेषण करेंगे, तथा दूसरे में मदुरै के प्रारम्भिक *नायक* शासकों की दुनिया के बारे में जानेंगे।

बोध प्रश्न-1

- 1) ‘क्या प्रारम्भिक भारत में ऐतिहासिक लेखन का अस्तित्व था?’ टिप्पणी कीजिए।

.....

.....

.....

- 2) भारत में ऐतिहासिक चेतना की उपस्थिति के संबंध में रोमिला थापर का मत बताइए।

- 3) दक्षिण भारत में ऐतिहासिक चेतना की उपस्थिति के विचार को स्पष्ट कीजिए जैसा कि टेक्स्चर्ज ऑफ़ टाइम में इस पर चर्चा की गई है।

- 4) समय के साथ-साथ इतिहास के विचार की बदलती प्रकृति पर चर्चा कीजिए।

8.4 आमुक्तमाल्यद

तेलुगु साहित्य नन्नया (ग्यारहवीं शताब्दी) के साथ शुरू होता है जिसने काव्य तथा काव्य शैली के रूप की स्थापना की थी। तेलुगु भाषा इससे भी प्राचीनतर है जिसकी पुष्टि स्थानों के नामों तथा अभिलेखों से भी होती है। पद्य तथा साहित्यिक शैली के उद्भव को नौवीं शताब्दी तक पीछे ले जाया जा सकता है। तेलुगु संस्कृति के मुख्य अभिरूपों की स्थापना तेरहवीं शताब्दी के काकतीय शासकों के युग में हुई थी। तेरहवीं शताब्दी में तिवकण तथा चौदहवीं शताब्दी में श्रीनाथ महत्वपूर्ण कवि थे जिन्होंने तेलुगु परम्परा में समुदाय, परम्परा और आंध्र क्षेत्र के बीच संबंध को जोड़ा। ऐतिहासिक आंध्र क्षेत्र की कोई स्पष्ट सीमाएँ नहीं थीं, बल्कि इसमें कई क्षेत्र थे जैसे तटीय तथा डेल्टा क्षेत्र। प्रारंभिक सोलहवीं शताब्दी में कृष्णदेवराय विजयनगर से कृष्णा जिले के श्रीकाकुलम में आए। यहाँ भगवान को आंध्र महाविष्णु (तेनुगु राय) पुकारा जाता था जिसका उल्लेख आमुक्तमाल्यद में भी है (1.11)।

नन्नया ने तेलुगु में पुराण जैसी रचनाओं तथा महाभारत महाकाव्य की शुरुआत की। पौराणिक काव्य ने बाद में कृष्णदेवराय (1509-29) के अधीन प्रबंध-काव्य के ग्रंथों का मार्ग प्रशस्त किया। नन्नया ने वास्तविक श्रोता के सम्मुख वाचक और श्रोता की उपस्थिति (संजय द्वारा धृतराष्ट्र को या सूत-वाचक) की चम्पू शैली को अपनाया। नन्नया का संबंध डेल्टा क्षेत्र से था तो तिवकण का नेल्लुरु से। उसने तेलुगु लेखन के संसार का विस्तार धर्मशास्त्र, व्याकरण ग्रंथों तथा कथा परम्परा के क्षेत्र में किया। नन्ने चोड मार्गी-देसी शैली का प्रतिनिधित्व करता है और उसने वास्तु-कविता के रूप में इसका तेलुगुकरण किया। चौदहवीं शताब्दी तक हमारे सम्मुख एक परिपक्व परम्परा थी जिसका विविध स्वरूपों में कई प्रकार से श्रीनाथ प्रतिनिधित्व करता था। सोलहवीं शताब्दी के शुरुआती दशकों में तेलुगु काव्य ने शास्त्रीय दर्जा हासिल कर लिया। कृष्णदेवराय (1509-1529) स्वयं एक कवि-राजा था तथा उसके सांस्कृतिक दरबार में अल्लसानी पेड्डन, नंदी तिममना, रामभद्रकवि, धूर्जती, मल्लन, पिंगली सुरन्ना, रामराजा भूषण और तेनाली रामकृष्ण कवि जैसे लब्ध प्रतिष्ठित विद्वान शामिल थे।

तेलुगु साहित्य के विकास में 27-1-1519 सी ई की तिथि परिवर्तन सूचक मानी जाती है क्योंकि यह विश्वास किया जाता है कि इस दिन कृष्णदेवराय अपने कलिंग अभियान के दौरान विजयावती (बेजवाड़ा) में रुका था और उसने आंध्र मधुसूदन (आंध्र विष्णु) की आराधना की थी। उसने इस दिन एकादशी का व्रत भी रखा, भगवान उसके स्वप्न में आए तथा उसे तेलुगु में अंडाल (पेरियलवार की पुत्री) की कथा लिखने का आदेश दिया। इस कृति को भगवान वेंकटेश्वर को समर्पित किया जाना था, अतः कृष्णदेव राय ने अपनी इस कृति आमुक्तमाल्यद की रचना की जिसे कृष्णदेव राय के शासन के पुनर्निर्माण के लिए विश्वसनीय तथा समकालीन कृति के रूप में देखना चाहिए।

परंपराओं के साथ ही कुछ कवि तथा भाष्यकार इसे अल्लसानी पेड्डना की रचना मानते हैं। वी. प्रभाकर शास्त्री ने इस मत के पक्ष में मजबूत तर्क देते हुए आंध्र पत्रिका में लिखा था:

- 1) मदालसाचरित, सत्यवधुपरिणयम्, सकलपार्थ सार संग्रहम् तथा रसमंजरी जैसी संस्कृत रचनाओं

का इसकी प्रस्तावना में उल्लेख है तथा जिनकी रचना का श्रेय कृष्णदेवराय को दिया गया है, ये उपलब्ध नहीं हैं।

- 2) इनमें से कुछ ग्रंथों, जैसे *रसमंजरी* तथा *सत्यवधुपरिणयम्*, की रचना का श्रेय अन्यत्र किसी और को दिया गया है।
- 3) *कृष्णराजविजयम्* या *रायवाचकामु* में उसे एक महान् योद्धा, दानी तथा संरक्षणदाता बताया गया है किंतु एक लेखक नहीं।
- 4) तेनाली रामकृष्ण कवि ने भी अपनी *पंडितआराध्यचरित* में इसका श्रेय पेड्डुना को दिया है।

लेकिन, इस कृति की मूल अवधारणा, रचना विधान, प्रयुक्त सामग्री, शैली, माध्यम, जिसमें इसे अभिव्यक्त किया गया है, परिवेश तथा कथानक, ये सभी पेड्डुना के बजाय किसी अन्य रचयिता की ओर ही संकेत करते हैं। पेड्डुना जहाँ अतिशयोक्ति का प्रयोग करने में मुखर है, वहीं *आमुक्तमाल्यदा* तथ्यपरक शैली का प्रयोग करती है। इसके अतिरिक्त, प्रचलित रीति से भिन्न शैली तथा तेलुगु मुहावरों का अभाव इसे *प्रबंध* काव्य के जगत में विशिष्ट स्थान प्रदान करता है। वैष्णव दर्शन की महानता भी इस कृति में व्यापक रूप से बखान की गई है। उपर्युक्त पर्यवेक्षण पर विचार करते हुए, तेलुगु भाषा के प्रति उसके विशेष लगाव (सभी *देसभाषाओं* में श्रेष्ठ) को देखते हुए कृष्णदेवराय को इसका लेखक स्वीकारा जा सकता है।

8.5 आमुक्तमाल्यदा ग्रंथ की ऐतिहासिक महत्ता

- 1) यह कृष्णदेवराय के अभियानों के विषय में जानकारी देता है। इसकी प्रस्तावना राजा की वंशावली चंद्रवंशी के रूप में उपलब्ध कराती है।
- 2) इसके छः सर्गों के अंत में दी गई छः पुष्पिकाएँ हमें उसकी विजयों के विषय में जानकारी देती हैं:
 - a) I — उदयगिरी पर विजय
 - b) II — कोंडाविडु पर विजय
 - c) III — कोंडापल्ली पर विजय
 - d) IV — सिमाचलम् में ईश्वर की आराधना तथा पोतनुरु में स्तम्भ की स्थापना
 - e) V — कुंबनी के दुर्ग का विध्वंस
 - f) VI — नैरमन का युद्ध

इस ग्रंथ में दिए गए स्थानों के नामों की पुष्टि में समस्या है, जब अभिलेखीय साक्ष्यों से इनका मिलान किया जाता है।

- 3) कुछ सीमा तक, हम इस ग्रंथ में वर्णित राजव्यवस्था की परिपुष्टि यूरोपीय यात्रियों के वृत्तांत में पाते हैं। सामान्यतः यह माना जाता है कि *आमुक्तमाल्यदा* ऐसा साहित्यिक साक्ष्य उपलब्ध कराती है जिसका समर्थन अभिलेखों से तो नहीं होता है, किंतु नूनिज़ के विवरण इसकी महत्ता में वृद्धि करते हैं।

8.5.1 श्रीनिवास रेड्डी की गिवर ऑफ़ द वॉर्न गाल्लैंड

श्रीनिवास रेड्डी की कृति *गिवर ऑफ़ द वॉर्न गाल्लैंड* (पेंग्विन क्लासिक्स, 2010) के आमुख में जॉर्ज एल. हार्ट कहते हैं, 'यह न केवल धार्मिक तथा भावनात्मक गहरायी है जो इस ग्रंथ को एक महान् काव्य बनाती है, जब हम अंडाल और भगवान विष्णु के प्रति उसके समर्पण को पढ़ते हैं, हम उस दुनिया को महसूस करते हैं जिन बहुविध तथा विभिन्न आयामों में कृष्णदेवराय ने इसे देखा था ... यह एक संत की सामान्य कथा को साहित्य की एक महान् कृति में बदल देता है।'।

कृष्णदेवराय को *साहित्य-समरांगण-सार्व-भम्म* अर्थात् युद्ध तथा साहित्य के मैदान में श्रेष्ठ सम्राट के रूप में जाना जाता था। वह दोनों विधाओं में प्रवीण था तथा उसने स्वयं के भीतर और अपने दरबार में दक्षिण भारतीय संप्रभुता तथा संस्कृति का परिष्कार किया। उसकी राजधानी वैभव तथा संस्कृति

का स्थल थी, तेलुगु साहित्य का तथाकथित स्वर्ण युग कृष्णदेवराय (1509-1529) के काल में अपने चरम को प्राप्त हुआ।

आमुक्तमाल्यद तथा
रायवाचकमु

तेलुगु साहित्यिक इतिहास में आमुक्तमाल्यद एक युगांतरकारी कृति है। अपने समय के बहुत से लेखकों के विपरीत, जो संस्कृत पुराणों से प्रेरणा लेते थे, यह कवि-राजा दक्षिण की तमिल संत अंडाल से प्रेरित था। वह भक्ति के भाव में गहरे में डूबी हुई थीं और उन्होंने विष्णु को भक्तिपूर्ण गीतों का समर्पण किया। ये भक्ति-गीत भक्ति परम्परा की आरंभिक अभिव्यक्तियों में शामिल हैं, धार्मिक समर्पण की एक शक्तिशाली भावना जिसने जाति-आधारित ब्राह्मणीय सिद्धांतों और अनुष्ठानों को नकार दिया, ईश्वर के प्रति अधिक प्रत्यक्ष और व्यक्तिगत प्रेम का उपदेश देने के लिए। सातवीं शताब्दी तक, उत्तर भारत से आयातित समृद्ध दार्शनिक तथा मिथक-शास्त्रीय तत्वों को दक्षिण भारतीय लोकाचार में नए सिरे से ढाल लिया गया था। यह रामानुज के अधीन विशिष्टाद्वैत के नए दार्शनिक मत सम्प्रदाय के रूप में विकसित हुआ। कृष्णदेवराय को विजयनगर के तत आचार्यों द्वारा श्री वैष्णव सम्प्रदाय में दीक्षित किया गया और वह अपने द्वारा चुने गए भगवान तिरुपति वेंकटेश्वर के प्रति अगाध श्रद्धा रखता था। उसकी आमुक्तमाल्यद एक भक्ति-काव्य थी, एक संकर-शैली जिसने संस्कृत के आलंकारिक काव्य और दक्षिण भारतीय भक्ति के धार्मिक रस को साथ में प्रवाहमान बनाए रखा। यह उन साहित्यिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक धाराओं को एकीकृत करता है जो कृष्णदेवराय के साम्राज्य में प्रवाहित थीं।

8.5.2 श्रीनिवास रेड्डी द्वारा आमुक्तमाल्यदा का विश्लेषण

कथा तथा चयन

यह कृति कवि-राजा के इष्ट देवता तिरुपति के श्री वेंकटेश्वर के आह्वान से शुरू होती है, जिसके बाद एक स्वप्न का वर्णन है जिसने तेलुगु में इस कृति की रचना करने की प्रेरणा दी थी। अगले 32 पद वंश-स्तुति या वंश की प्रशंसा से संबंधित हैं। यह खंड पेड्डुना के मनुचरितम् से लिया गया है।

अध्याय 1, प्रथम-आस्वासम्, श्रीविल्लीपुत्तुर का वर्णन करता है। इसका अंत विष्णुचित्त या पेरियलवार के परिचय के साथ होता है। इस अध्याय में हमें चरागाह क्षेत्र का वर्णन मिलता है। अगला अध्याय पांड्यों की राजधानी मदुरै की ओर मुड़ जाता है। इस वर्णन को ग्रीष्म-ऋतु वर्णन या गर्मी के मौसम के वर्णन के रूप में जाना जाता है। मोक्ष या आध्यात्मिक मुक्ति पाने के श्रेष्ठ मार्गों पर चर्चा तथा परिसंवाद इस अध्याय की विशेष पहचान है। तीसरा अध्याय पांड्य राजदरबार में विष्णुचित्त की शास्त्रार्थ की दक्षता से शुरू होता है। चौथा अध्याय इनमें सबसे विस्तृत आस्वासम् है जिसमें विष्णुचित्त अंततः पांड्य राजा को श्री वैष्णव मत का अनुयायी बनाने में सफल होता है। उसके दास-अवतार-स्तोत्रम् का यहाँ उल्लेख किया गया है, इस अध्याय का अंत राज-धर्म या नीतिपूर्ण शासन पर 82 श्लोकों के साथ होता है। अध्याय पाँच हमारा परिचय गोडा देवी से कराता है जो विष्णुचित्त की दत्तक पुत्री हैं। इस अध्याय का अंत बसंत के आगमन के साथ होता है। छठा अध्याय इस दृश्य को श्रीरंगम् में ले जाता है। भगवान विष्णु, विष्णुचित्त को अपनी पुत्री का विवाह भगवान रंगनाथ से करने की सलाह देते हैं। इसके पश्चात् आता है एक महत्वपूर्ण दिव्यदेशम् और अंडाल के रंगनाथ से विवाह का वर्णन।

8.5.3 कुछ उद्धरण

I. स्वप्न

आंध्र विष्णु मेरे स्वप्न में प्रकट हुए और कहा:

- I.14 'अगर तुम पूछो, आपका कौन सा रूप? जिसे मुझे याद रखना चाहिए?'
सुनो, क्योंकि मैं तुम्हें बताना चाहूँगा
फिर से वह कहानी श्रीरंगम् में मेरे विवाह की
क्योंकि मैं हूँ तेलुगु राजा और आप हो एक कन्नड़ राजा
बहुत पहले अनिच्छा से स्वीकारी थी मैंने एक व्यक्ति द्वारा दी गई कंठमाल,

इस पाप से मुक्ति के लिए अपनी प्रिया से उपहार पाने के आनंद का करो बखान
कहो मुझसे मेरी प्रिया *आमुक्तमाल्यद*, ‘अपने कंठ से उतारी माला देने वाली’ कथा।

II- I-15 तेलुगु क्यों?

‘यदि तुम पूछो, “तेलुगु क्यों”?’

ऐसा है क्योंकि यह है एक तेलुगु देश और मैं हूँ एक तेलुगु राजा

तेलुगु अपने में है एक श्रेष्ठ भाषा

उन सब राजाओं से बात करने के बाद, जो करते हैं तुम्हारी सेवा, क्या तुमने नहीं किया
यह अनुभव सभी प्रांत-प्रांतरों की भाषाओं में तेलुगु है सर्वश्रेष्ठ’।

III.

‘बुद्धिसंपन्न मनुज, जाओ आज, शीघ्र, मधमा के पास, उन सभी दंभ से अंधे हुए विद्वानों
का हराने के लिए जो पांड्य दरबार में डींगें हाँक रहे हैं। करो मेरी शक्ति का उद्घोष,
और ग्रहण करो उपहार, राजा जो हो जाएगा हतप्रभ इससे, करो उस पर दया और जगाओ
मेरे प्रति प्रेम उसमें।’

8.5.4 कुछ दृष्टिकोण

हम वेल्चेरु नारायण राव तथा डेविड शुलमैन द्वारा किए गए अवलोकनों का उल्लेख करना चाहेंगे,
जो इस ग्रंथ के अध्ययन का दूसरा पहलू सामने लाते हैं।

इस भाषायी तथा काव्यात्मक दायरे के भीतर हम राजत्व तथा राजनीतिक व्यवस्था के लिए
एक बिल्कुल नया आधार निर्मित करने का प्रयत्न देख सकते हैं। स्वयं कृष्णदेवराय की तरह
ही (जैसा कि मध्यकालीन परम्परा आग्रह करती है), उनकी कविता के राजसी नायक, एक
तरह से, संन्यासी राजा हैं, जिन्होंने अनिच्छा से ही शासन करना स्वीकारा है, लेकिन एक
बार राजनीतिक क्षेत्र में पदार्पण होने के बाद वे प्रभावी, शक्तिसंपन्न तथा बुद्धिमान सिद्ध हुए
हैं। राजनीति की यह नई समझ, जो राजा के समग्र, एकरूप आत्म के भीतर राजत्व के
अंतर्निहित द्वंदों तथा तनावों को समाहित करती है, साम्राज्य की राजधानी में प्रारंभिक सोलहवीं
शताब्दी की मनो-सामाजिक दुनिया की अधिक सामान्य नवाचारी व्याख्या का अंग है।

विजयनगर-संबंधी अध्ययनों से जुड़े नए शोध कार्य लगभग 1346-1565 के काल में संरक्षण की
गतिविधियों पर केंद्रित हैं तथा उनका अन्वेषण करते हैं।

विजयनगर की सैन्य गतिविधियों ने पूर्ववर्ती विद्वानों को यह तर्क प्रस्तुत करने के प्रति आकर्षित
किया था कि यह दक्षिण में इस्लाम के और अधिक विस्तार को रोकने के लिए रक्षात्मक कवच
था। आधुनिक विद्वानों ने विजयनगर दरबार द्वारा विभिन्न स्रोतों से सांस्कृतिक तत्वों को ग्रहण
करने के विचार पर ध्यान दिया है। क्या विजयनगर राज्य ने संरक्षण प्रदान करने में चयनात्मक
रवैया अपनाया था? क्या विजयनगर द्वारा प्रदत्त संरक्षण में अवसरवादी लचीलापन था? ये
मौलिक सवाल हैं तथा ग्रंथों का गहन अध्ययन ही इनका उत्तर दे सकता है।

उदाहरण के लिए, *पोलेमिक्स एंड पेट्रोनेज इन द सिटी ऑफ़ विकट्री* (2016, कैलिफ़ोर्निया प्रेस) में
वालोविय स्टोकर उन तरीकों का अन्वेषण करते हैं, जिनके माध्यम से विजयनगर की संरक्षण-संबंधी
गतिविधियों ने हिंदू संप्रदायों की पहचानों की अभिव्यक्ति को प्रभावित किया। स्टोकर यह तर्क
देते हैं कि विजयनगर दरबार हिंदू धार्मिक संस्थाओं को संरक्षण प्रदान करने में चयनात्मक रवैया
अपनाता था तथा इसका मंतव्य हमेशा धार्मिक नहीं होता था। विजयनगर राज्य द्वारा संरक्षण देने
में अवसरवादी लचीलेपन ने हिंदू संप्रदायों के प्रमुखों को बौद्धिक परियोजनाओं, अंतर-सांप्रदायिक
सहयोग तथा प्रतिस्पर्धा में शामिल होने को प्रेरित किया।

बोध प्रश्न-2

- 1) तेलुगु साहित्य तथा भाषा के विकास में आरंभिक तेलुगु लेखकों के योगदान का उल्लेख
कीजिए।

.....

.....

.....

.....

2) क्या आप इससे सहमत हैं कि कृष्णदेवराय के अधीन तेलुगु भाषा शास्त्रीय युग में प्रवेश कर चुकी थी?

.....
.....
.....

3) आमुक्तमाल्यद के ऐतिहासिक महत्व का उल्लेख कीजिए।

.....
.....
.....

4) श्रीनिवास रेड्डी द्वारा किए गए आमुक्तमाल्यद के विश्लेषण का परीक्षण कीजिए।

.....
.....
.....

5) दक्षिण भारत में ऐतिहासिक चेतना की उपस्थिति पर नारायण राव, डेविड शुलमैन तथा संजय सुब्रह्मण्यम का क्या तर्क है?

.....
.....
.....

8.6 रायवाचकमु (राजा के विवेकपूर्ण संवाद)

इतिहासकार समूह, जिसमें वेल्चेरु नारायण राव, डेविड शुलमैन और संजय सुब्रह्मण्यम शामिल थे, ने दक्षिण भारत में ब्रिटिश अधिग्रहण से पूर्व इतिहास और ऐतिहासिक चेतना के अस्तित्व का विषय उठाया है। 2001 में अपनी कृति *टेक्सचर्ज़ ऑफ़ टाइम, वर्किंग हिस्ट्री ऑफ़ साउथ इंडिया 1600-1800* में उन्होंने यह तर्क दिया है कि तेलुगु, तमिल, संस्कृत, मराठी तथा फ़ारसी में रचे गए ग्रंथ कई रूपों में थे, जैसे लोक-काव्य से लेकर दरबारी काव्य तक, और गद्यात्मक विवरण भी। उन्होंने यह दर्शाना चाहा है कि दक्षिण भारत में इतिहास कई शैलियों में लिखा गया था और इतिहास लेखन किसी औपचारिक विशेषता या शैली से जुड़ा हुआ नहीं था। पश्चिमी यूरोप में इतिहास अपेक्षतः एक सुनिश्चित और स्थायी शैली के रूप में उभरा था। 19वीं शताब्दी के प्रत्यक्षवाद के पहले से ही इस शैली की स्पष्ट औपचारिक विशेषताएँ थीं, एक विशेष ढाँचा और अपेक्षाकृत: एक स्पष्ट पद्धति। यह पद्धति थी स्रोत सामग्री को एकत्र करना, उनकी विश्वसनीयता के आधार पर उन्हें अलग करना और इन्हें गद्य विवरणों के रूप में प्रस्तुत करना। हीगल के बाद से गद्य का चयन अधिक सुव्यवस्थित हो गया। इस लेखक-समूह ने इस ओर संकेत किया है कि दक्षिण भारत में इतिहास स्वयं में कोई एक विधा नहीं थी और इतिहास लेखन के लिए कोई एकल शैली प्रचलित नहीं थी। विद्वानों और इतिहासकारों ने आमतौर पर बिना किसी विश्लेषण के एक ही पैटर्न का अनुसरण करते हुए, पुराने ऐतिहासिक ग्रंथों को कथाओं तथा साहित्यिक मिश्रण के रूप में ग्रहण करते हुए इस्तेमाल किया।

टेक्सचर्ज़ ऑफ़ टाइम का लेखक-समूह यह भी तर्क देता है कि यदि पुराण प्रमुख साहित्यिक विधा के रूप में प्रचलित है तो इतिहास भी पुराण के रूप में लिखा जाएगा, यदि काव्य का प्रचलन प्रभावी है तो हमें इतिहास काव्य के रूप में मिलेगा, यदि गद्यात्मक इतिवृत्तांत प्रचलन में हैं तो वह भी इतिहास लेखन में प्रमुखता पाते दिखेंगे। दूसरे शब्दों में, किसी भी शैली में हमें इतिहास तथा गैर-इतिहासात्मक लेखन देखने को मिलता है – और लक्षण, लय-परिवर्तन, वाक्य-विन्यास, शब्द-योजना, सुस्पष्टता, भावों की सघनता तथा तीव्रता, संरचनागत अंतराल तथा मौन, छंद-युक्तियाँ, ध्वन्यात्मक-सौंदर्य के विभिन्न गुण तथा किसी अभिकथन में समय के अनुरूप प्रकट व्यंजना हमें इतिहास को गैर-इतिहासात्मक लेखन से अलग करने में सहायता करता है। नियमित तौर पर किसी परम्परा के भीतर पसंद की जाने वाली शैली में बदलाव आता रहता है, जिसके अनुरूप ही इतिहासलेखन के माध्यम में भी परिवर्तन होता है। दूसरे शब्दों में, आसानी से ‘अति गंभीर इतिहासलेखन’ से ‘ऐतिहासिक उपन्यास’ और इससे एक ‘उपन्यास-लेखन’ की ओर जाया जा सकता है, यद्यपि तीनों ही गद्यात्मक वर्णन विधाएँ हैं और

अपने रूप-विधान तथा औपचारिक शैलियों को लेकर एक-दूसरे के काफी निकट हैं। उन्होंने तेलुगु में एक निश्चित प्रकार के **करणम्** इतिहासलेखन का भी उल्लेख किया है। इस लेखक-वृन्द के अनुसार, सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी के राजनीतिक इतिहास पर केंद्रित ग्रंथ व्यवहारिक अनुभव तथा परम्परा से प्राप्त ज्ञान के भंडार रहे हैं। वे आगे कहते हैं, ‘पूर्व-औपनिवेशिक भारत के इतिहासलेखन में अक्सर स्वीकार किया गया, नगरीय तथा ग्रामीण क्षेत्र के बीच स्थापित उग्र प्रतिरोध कभी-कभी विजयनगर, मदुरै और तंजावुर, तथा छोटे से गाँव के एक आम किसान के घर के बीच मौजूद जटिल पदानुक्रम को धुंधला बना देता है’। इस प्रकार के ग्रंथों में एक तरह की विलक्षणता है और यह **करणम्** के व्यक्तित्व के सामाजिक परिवेश पर निर्भर था।

फिलिप वैगनर अपने अनुवाद में यह तर्क देते हैं कि **रायवाचकमु** सत्रहवीं शताब्दी से संबंधित है, हालाँकि यह प्रारंभिक सोलहवीं शताब्दी की घटनाओं का वर्णन करता है। **रायवाचकमु** में इसकी तिथि को लेकर कोई आंतरिक साक्ष्य उपलब्ध नहीं है। किंतु इसे **करणम्** गद्य शैली की विलक्षणता के साथ लिखा गया है और यह **प्रतापरुद्रचरितम्** जैसी आरंभिक सामग्रियों से ग्रहण करता है।

यह भी तर्क दिया गया है कि सोलहवीं तथा सत्रहवीं शताब्दी में एक विशेष प्रकार की दक्षिण भारतीय **करणम्** संस्कृति अस्तित्व में रही है, एक नए प्रकार के कुलीन जो दस्तावेजों के लिखित प्रसार हेतु समर्पित थे और सत्ता, राजनीति, तथा राज्य के स्वयं की मानकों पर किए गए विश्लेषण के आधार पर ऐतिहासिक स्मृति को व्यवस्थित करने के लिए उत्सुक थे, जिसने अंततः उन्हें उभरती हुई **नायक** व्यवस्था के भीतर एक सुनिश्चित स्थान प्रदान किया।

यह ग्रंथ गद्यात्मक लेखन की ऐसी संस्कृति पर प्रकाश डालते हैं, जिसका मंतव्य मात्र पाठबद्ध करने या लेखबद्ध करने के बजाय संवाद या संचार करना था। यह कोई एकल शैली नहीं है और किसी समरूप शैली या विधान के प्रति प्रतिबद्ध नहीं थी।

यह स्वतंत्र रूप से उस समय अस्तित्व में रही पद्धतियों को ग्रहण करती है। न तो इन कृतियों को किसी के निर्देशन पर लिखा गया था और न ही ये ईश्वर को अर्पित की गई थी। **रायवाचकमु** स्वतंत्र रूप से विजयनगर से ओडिशा और ओडिशा से दिल्ली में प्रसारित होती है। हम एस. के. अयंगर द्वारा प्रारंभिक बीसवीं शताब्दी में इतिहास लेखन हेतु इस ग्रंथ का एक स्रोत के रूप में किए गए इस्तेमाल पर विचार करने के बाद फिलिप वैगनर के अनुवाद पर विचार करेंगे।

कृष्णस्वामी अयंगर इसे कृष्णदेवराय के राज्य काल के वृत्तांत के रूप में ग्रहण करते हैं, जैसा कि एक समकालीन सूत्र ने विश्वनाथ नायक को इस ग्रंथ में **स्थानपति** के रूप में उल्लेख किया है। उनके द्वारा इस ग्रंथ के प्रति अपनाए गए उपागम और इसके उपयोग को निम्नलिखित ढंग से समझा जा सकता है:

- 1) अपेक्षाकृत अधिक ‘ऐतिहासिक’ तथा तथ्यात्मक खंडों को अलग कर उन्हें स्रोत-पुस्तकों में प्रकाशित किया गया।
- 2) विद्वानों ने इन ऐतिहासिक खंडों को सजग विश्लेषण और आलोचनात्मक व्याख्या के दायरे में रखकर देखा, और संबंधित आलेखों तथा लघु शोध-प्रबंधों की रचना की।
- 3) तेलुगु के जानकारों ने इस ग्रंथ को ‘एक कविता’, ‘एक दरबारी कविता’ तथा ‘कृष्णदेवराय के रोज़नामचे’ के रूप में देखा।
- 4) विश्वनाथ नायक की पहचान **नायक** व्यवस्था के संस्थापक तथा मदुरै के **नायक** के रूप में की गई।

महत्वपूर्ण बिन्दु:

- 1) ‘**रायवाचकमु**, प्रारंभिक **नायक**-कालीन मदुरै में इतिहासलेखन संबंधी एक देशज दृष्टिकोण का स्पष्ट साक्ष्य प्रस्तुत करता है, उन रूपों को उजागर करते हुए जिनमें अतीत को चित्रित किया जा सकता था तथा उन विचारधारात्मक उपयोगों की ओर संकेत करते हुए जिनमें इस ज्ञान को प्रयोग किया जा सकता था’ (वैगनर)।
- 2) ‘अत्यधिक सामान्य शब्दों में कहें तो इस ग्रंथ का मेरा पाठ यह संकेत करता है कि **रायवाचकमु** में विजयनगर के अतीत के ज्ञान को मदुरै के **नायक** शासन की राजनीतिक वैधता के पक्ष में तर्क प्रस्तुत करने के लिए गढ़ा और उपयोग में लाया गया था’ (वैगनर)।

- 3) प्रथम भाग को 'टेक्स्ट एंड कॉन्टेक्स्ट' (पाठ तथा संदर्भ) नाम दिया गया है, जहाँ वैगनर उन कारकों की चर्चा करते हैं जिनके आधार पर उन्होंने *नायक* दरबार को इस ग्रंथ के संदर्भ के रूप में पहचाना।

दूसरा खंड, अतीत को उपयोग में लाने की दृष्टि से विजयनगर के अतीत की प्रासंगिकता की चर्चा करता है। वैगनर कहते हैं कि, 'यद्यपि यह ग्रंथ प्रत्यक्ष रूप से इतिहास-सम्मत बनाने के इस विशिष्ट तर्क में हिस्सा नहीं लेते हैं कि *नायक* शासकों की वैधता कृष्णदेवराय के साथ विश्वनाथ के संबंध से उत्पन्न हुई है, यह एक विचारधारात्मक निष्पत्ति प्रस्तुत करता है, विजयनगर के इतिहास को राय के शासन की समाप्ति के बाद, जब *नायक* शासन की स्थापना हुई, के साथ समाप्त करते हुए यह मदुरै के शासकों के ऊपर अन्य "उत्तराधिकारियों" के अधिकारों को नकार कर देता है।'

वैगनर यह संकेत करते हैं कि वर्णात्मक रूप में यह ग्रंथ जो कार्य करने में असफल रहता है, वह इसकी आधारभूत विमर्श की संरचना में निहित संबंधों द्वारा प्रभावी रूप से सम्पन्न हो जाता है। 'वर्णन करने वाले के रूप में *स्थानपति* का रचनात्मक युक्ति के रूप में प्रयोग, कृष्णदेवराय के दरबार से जो कि इससे 80 वर्ष पूर्व मौजूद रहा था, काल्पनिक तथा अनैतिहासिक रूप से मदुरै के तत्कालीन अपने *नायक* स्वामी के पास "प्रतिवेदन" के माध्यम से, यह लेखक *नायकों* तथा विजयनगर के राजा के बीच एक निकट और निरंतर संबंध का संकेत करने में सफल रहा है।'

'विजय के नगर' अर्थात् विजयनगर की सत्ता के बीज-यंत्र (Talisman) के रूप में वर्णन से इतर यह ग्रंथ चर्चा करता है 'कलियुग के राक्षसों' (उन पाँच मुस्लिम शक्तियों का जो विजयनगर को ध्वंस करने के लिए 1565 में एक साथ आ गए थे) की। दो पूरे अध्याय इन मुस्लिम राज्यों तथा तुर्क नरेशों पर केंद्रित हैं। अध्याय 4 उनकी राजधानियों तथा दरबार के सामान्य दस्तूर के विषय में जानकारी देता है, वहीं अध्याय 6 इन तीन राज्यों पर कृष्णदेवराय की विजयों का विशेष रूप से वर्णन करता है। वैगनर ने यह अनुभव किया है कि यह समझना महत्वपूर्ण है कि इस जटिल सांस्कृतिक विरोधाभास को लेखक के स्वयं के सांस्कृतिक परिवेश की अभिव्यक्ति के रूप में पहचाना जाए न कि पूर्व में कृष्णदेवराय के काल के परिवेश की अभिव्यक्ति के रूप में। इस ग्रंथ का इस्लाम-विरोधी प्रतिपक्षी तर्क सांस्कृतिक रूप से विनाशकारी कृत्य के उत्तरदायी कारकों के प्रति एक स्वाभाविक उदासीनता की अभिव्यक्ति है यह तो *तुरुकों* के साधारण व्यक्तिगत और सांस्कृतिक व्यवहार हैं जिन्हें आलोचना का शिकार बनाया गया है न कि इस्लाम धर्म के औपचारिक विश्वासों तथा रीतियों को। तुर्कों को परिभाषित करने के लिए इस लेखक ने तीन तरह की युक्तियों को अपनाया है:

- तुर्कों की तुलना धर्मविहीन होने के संदर्भ में हिंदू गजपतियों के साथ की गई है;
- तुर्कों के राज्य को शत्रुतापूर्ण क्षेत्रों के रूप में बताया गया है; और
- आधार्मिक 'तुर्कों' और धार्मिक राजाओं के बीच एक विरोध का भाव।

इस ग्रंथ का अवधारणात्मक परिदृश्य 'तीन सिंहासनों' (*मुदु सुरित्रासंतु*) के विचार के इर्द-गिर्द घूमता है: *अश्वपति*, *गजपति* तथा *नरपति*। बीजापुर, अहमदनगर और गोलकुंडा के शासकों को *अश्वपति* कहा गया है।

वैगनर के शब्दों में, 'इस्लाम दक्षिण भारत में एक महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में लगभग तीन शताब्दियों से मौजूद रहा था जब *रायवाचकमु* की रचना हुई, लेकिन सोलहवीं शताब्दी के मध्य तक यह कभी भी पहले से मौजूद दक्षिण भारतीय सामाजिक व्यवस्था के लिए गंभीर खतरा नहीं बना था और अधिकांशतः इसको नज़रअंदाज किया गया था। दक्षिण भारत में साम्राज्यिक सत्ता के अंतिम प्रतीक और स्रोत का दखन की सल्तनतों द्वारा उन्मूलन कर दिए जाने के साथ यह स्पष्ट हो गया कि इस्लाम की यह अजनबी सांस्कृतिक व्यवस्था एक ऐसी परिघटना थी जिसका सीधे-सीधे सामना किया जाना था।'

8.7 रायवाचकमु का ग्रंथीय स्वरूप

रायवाचकमु मोटे तौर पर आठ विषय-वस्तुओं पर ध्यान केंद्रित करता है:

- यह *स्थानपति* द्वारा प्रस्तुत राय के विवेकपूर्ण संवाद हैं
- विजयनगर की स्थापना

- 3) कृष्णराय की शिक्षा तथा राज्याभिषेक
- 4) कृष्णराय तथा तिम्मर्ष
- 5) तुर्कों के विवरण
- 6) गजपति राज्य का वृत्तांत
- 7) तुर्कों के साथ युद्ध
- 8) गजपतियों के विरुद्ध अभियान

उद्धरण

- (a) युवा कुमारों, पढ़ो मेरे वचन,
और तुम्हें मिलेगा ज्ञान,
तैरो इन शास्त्रों के महासागरों में,
और चलना चाहिए तुम्हें धर्म मार्ग पर,
अपने स्वामियों की सेवा तथा शत्रुओं का संहार करते हुए।
- (b) वह मनुष्य जो देवी-श्री को समर्पित जीवन जीता है,
गुणों की खान की तरह दीप्तिमान,
इस सिंहासन के अतिरिक्त और कहीं नहीं ढूँढ़ता है शरण,
और साक्षात् राजा से परे।
- (c) संपत्ति को पाने को: प्रजा को करो संपन्न,
प्रजा को करने को संपन्न:
न्याय ही है मार्ग।
हे कृष्णराय!
कहते हैं वे न्याय
ही है राजाओं का कोष।
- (d) जहाँ होता है साहस, रहेगी वहाँ लक्ष्मी,
और होती है जहाँ लक्ष्मी, विष्णु करते हैं वहाँ वास,
और जहाँ विराजते हैं विष्णु, वहाँ होता है धर्म,
और जहाँ धर्म होता है, निस्संदेह विजय मिलती है वहाँ।
- (e) शत्रु बन जाते हैं मित्र,
विष निर्दोष जल,
और पाप हो जाते हैं पुण्य —
जगन्नाथ हों जब साथ तुम्हारे,
विपरीत स्थिति बन जाती हैं सहायक।
- (f) हे कृष्णराय नर-सिंह!
दूर से ही कर देते हो तुम तुर्कों का वध
केवल अपने नाम के प्रताप से।
हे गजपति राजाओं के स्वामी!
तुम्हारी दृष्टि मात्र से
गजपति राज भाग उठे भय से।

8.8 सिंहावलोकन

जिस प्रकार ग्रंथ विभिन्न प्रकार से व्याख्या किए जाने के लिए मुक्त होते हैं, उसी प्रकार इनका विभिन्न प्रकार से पाठ किया जा सकता है। ग्रंथ की व्याख्या करते हुए उसके सामाजिक-सांस्कृतिक

परिवेश या ऐतिहासिक संदर्भ को ध्यान में रखना चाहिए। उदाहरण के लिए, किसी ग्रंथ में मौजूद कथाओं को राज्य तथा उसकी गतिशीलता में उभार, राजत्व के विचार में लाए गए परिवर्तनों, सामाजिक संरचना में आए बदलावों, इत्यादि के संदर्भ में समझना चाहिए। ये कथाएँ उत्तरी व दक्षिणी सांस्कृतिक तत्वों के बीच एकीकरण को भी प्रदर्शित करती हैं। इतिहासकार के लिए अभिलेखीय साक्ष्य किसी ग्रंथ के लिए ऐतिहासिक आधार प्रस्तुत करते हैं। ग्रंथ-आधारित अवशेष भारतीय संस्कृति के विश्लेषण के लिए भी उपयोगी विश्लेषणात्मक युक्तियाँ हैं। ग्रंथों का सरोकार मुख्यतः अभिव्यक्ति, सूचना तथा संचार के साथ होता है। इनकी निर्मिती, इनके घटक और इनमें निहित आशय इतिहासकार का ध्यान खींचते हैं। कोई ग्रंथ समय-विशेष के अनुरूप तथा अपने समय के दायरे से परे विस्तृत उद्देश्यों को उचित ठहराते हैं, और समय-विशेष से बँधे पहलू निरंतरता को प्रदर्शित करते हैं, वहीं समय-विशेष से स्वतंत्र पहलू परिवर्तनों को प्रकट करते हैं। दूसरे शब्दों में, इनकी आने वाली पीढ़ियों के लिए भी भौतिक प्रासंगिकता बनी रहती है।

आमुक्तमाल्यद, कृष्णदेव द्वारा रचित, श्रीविलिपुतुर की वैष्णव संत अंडाल/गोडा की कथा का वर्णन करती है। भगवान् वेंकटेश्वर द्वारा कृष्णा जिले में मौजूद श्रीकाकुलम् में एक स्वप्न में प्रकट होकर इस कविता की रचना के निर्देश दिए गए थे। परंपरागत विज्ञान की विभिन्न शाखाओं में हुए व्यापक विकास को प्रतिदिन के जीवन में उतारा जाता है। असाधारण यथार्थवाद और अतिरंजित कल्पना अपना प्रभाव दिखाते हैं, जब कवि पाकशाला से युद्ध क्षेत्र में, गणिकाओं के आवास क्षेत्र से मंदिर या राज महल की ओर मुड़ता है। राजनीति की यह नई समझ राज्य के अंतर्निहित विरोधाभासों और तनावों को सामने रखती है। पेडुना और थिमन्ना की रचनाएँ साम्राज्य की राजधानी में अस्तित्व में रही मनो-सामाजिक दुनिया को और भी विस्तार से प्रस्तुत करती हैं।

श्रीनिवास रेड्डी की अंतर्दृष्टि ध्यान देने योग्य है। राजा के द्वारा देखा गया स्वप्न एक बहु-सांस्कृतिक यथार्थ है; यह काव्य संस्कृत की आलंकारिक कविता को तेलुगु के शब्द-विन्यास तथा भावों के साथ मिलाता है। ग्यारहवीं शताब्दी के आंध्र महाभारतमु से लेकर तेलुगु साहित्य चंपू, पद्य, गद्य तथा आद्य-काव्य के रूप में विकसित हुआ और कृष्णदेवराय के अधीन तेलुगु साहित्य के इस स्वर्णिम युग में परिपक्वता को प्राप्त हुआ। आमुक्तमाल्यद को भक्ति-काव्य की श्रेणी में रखा जा सकता है जो कृष्णदेवराय के साम्राज्य में प्रवाहित साहित्यिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक धाराओं को परस्पर मिश्रित करता है। हम अध्येताओं की दृष्टि एक बार फिर से इस ओर खींचना चाहेंगे कि दक्षिण भारत में इतिहास स्वयं में एक विधा नहीं रही है और सोलहवीं शताब्दी में कोई एकल विधा को इतिहास लेखन हेतु नहीं स्वीकारा गया था। यहाँ इतिहासलेखन के रूप में **इतिहास-पुराण** की सामग्री पर रोमिला थापर के विचार को याद करना एक गहन अर्थ में प्रासंगिक रहेगा।

ए. के. वार्डर ने हमें उन कृतियों का एक सर्वेक्षण प्रस्तुत किया है जो अपने चरित्र में ऐतिहासिक स्वरूप की हैं। निकोलस डर्क्स ने पूर्व-औपनिवेशिक दक्षिण भारत के आख्यानों के संरचनागत नमूनों का अन्वेषण करते हुए नृजातीय-इतिहास के एक नए मॉडल को प्रस्तुत किया है।

टेक्सचर्स ऑफ़ टाइम (राइटिंग हिस्ट्री ऑफ़ साउथ इंडिया 1600-1800) के लेखक, करणम् इतिहास लेखन के विकास को दृष्टि में रखते हैं। उनके अनुसार सत्रहवीं तथा अठारहवीं शताब्दी में राजनीतिक इतिहास पर केंद्रित सुविख्यात ग्रंथों की रचना करणम्-लेखकों द्वारा की गई थी। फिलिप वैगनर का यह तर्क है कि रायवाचकमु का संबंध सत्रहवीं शताब्दी से प्रतीत होता है (न कि प्रारंभिक सोलहवीं शताब्दी से)। यह कृष्णदेवराय के शासन की घटनाओं का वर्णन करता है और करणम्-गद्य की शैली में लिखा गया है। इन तीनों लेखकों ने यह भी अनुभव किया है कि 'एक नए प्रकार के कुलीन जो दस्तावेजों के लिखित प्रसार हेतु समर्पित थे और सत्ता, राजनीति, तथा राज्य के स्वयं की मानकों पर किए गए विश्लेषण के आधार पर ऐतिहासिक स्मृति को व्यवस्थित करने के लिए उत्सुक थे, जिसने अंततः उन्हें उभरती हुई नायक व्यवस्था के भीतर एक सुनिश्चित स्थान प्रदान किया'। उन्होंने यह भी देखा है कि करणम् निचले स्तर से शुरू करने वाले व्यक्ति के लिए एक आदर्श था जो अपनी चतुराई तथा दक्षता से अंततः राजा और सम्राटों के कंधे से कंधा मिलाने में सफल हो जाता था। इसके उदाहरण गोलकुंडा राज्य में नियोगी ब्राह्मण अक्कन्ना तथा मदन्ना और अप्पाजी (सालुव-तिम्मा) हैं, जिन्होंने रायवाचकमु में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। इसकी आरंभिक प्रारंभिक पंक्तियाँ इस प्रकार हैं:

मैंने कृष्णराय की कथा की रचना की है
ताकि विजयनगर की सच्ची घटनाओं —
सत्य शब्द जो मैंने सुने हैं विश्वसनीय लोगों से
वे स्पष्ट हो जाएँ सबके लिए।

इसका लिपिक (रायसमुलु) याद करता है
राज्य-कला के उन सिद्धांतों को जिन्हें नायुडु (अप्पाजी) ने सिखाया था राजा को
अगर वे पढ़ें और करें इनका अनुकरण
बनेंगे विशेषज्ञ
और अगर पढ़ें युवा जन इसे, उनके मस्तिष्क का होगा विस्तार
राज्य कला की विद्या में वे होंगे प्रवीण
और पा लेंगे मार्ग नष्ट करने का अपने शत्रुओं को।

लेखक को जो ज्ञात है उसका स्रोत वह है जो उसने विश्वसनीय लोगों से सुना है। पॉल वॉइन इसे 'परम्परा के रूप में इतिहास या वल्गेट (vulgate)' कहते हैं। ऐतिहासिक परम्परा जन्म लेती है न कि स्रोत सामग्रियों से गढ़ी जाती है। वैगनर इस ग्रंथ को स्थानपति के प्रतिवेदन के रूप में देखते हैं, इसके अंतिम वाक्य इस प्रकार हैं:

और इसलिए, हे मेरे स्वामी, मैंने आपके लिए हर कुछ लिखा है जो हुआ है अब तक घटित और भेजता रहूँगा मैं उन सबका समाचार जो भी होता रहेगा भविष्य में। मैं अपने स्वामी के चरण कमलों में समर्पित हूँ और उनके आश्रय का आकाँक्षी हूँ।

रायवाचकमु किसी भी दृष्ट्यात्मक ऐतिहासिक लेखन की शैली के रूप में श्रेणीबद्ध नहीं की जा सकती है। वाचकमु का शाब्दिक अर्थ राजा के 'समाचार/रिपोर्ट' या 'प्रतिवेदन, विवेकपूर्ण संवाद' ('tidings') है। इस ग्रंथ का लेखक ऐतिहासिक लेखन के संबंध में परंपरागत आख्यानों को नकार देता है और अपने वृत्तांत को एक राजनयिक द्वारा प्रस्तुत समाचार/रिपोर्ट के रूप में पेश करता है।

बोध प्रश्न-3

- 1) इतिहास के महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में रायवाचकमु की महत्ता बताइए।
.....
.....
.....
- 2) क्या आप वैगनर के इस तर्क से सहमत हैं कि रायवाचकमु नायक वैधता के बदलते आधारों को रेखांकित करता है?
.....
.....
.....
- 3) रायवाचकमु द्वारा 'कलियुग के राक्षसों' के विश्लेषण का समालोचनात्मक परीक्षण कीजिए।
.....
.....
.....
- 4) क्या आप वैगनर के इस मत से सहमत हैं कि भारतीय संस्कृति के विश्लेषण हेतु पाठात्मक अवशेष उपयोगी विश्लेषणात्मक युक्ति हैं?
.....
.....
.....

इस इकाई में हमने तेलुगु साहित्यिक ग्रंथों, विशेषकर *आमुक्तमाल्यद* तथा *रायवाचकमु*, के ऐतिहासिक महत्व पर चर्चा की है। *आमुक्तमाल्यद* न केवल कृष्णदेवराय के अभियानों पर प्रकाश डालता है बल्कि विजयनगर के राजाओं की वंशावली की निर्मिति तथा स्वरूप की प्रकृति तथा उसकी प्रासंगिकता का भी संकेत भी करता है। यह विजयनगर के राजाओं की धार्मिक विचार-दृष्टि के साथ ही उस काल के साहित्यिक तथा सांस्कृतिक परिवेश पर भी रोशनी डालता है।

अन्य तेलुगु ग्रंथ जिसका विश्लेषण किया गया है वह *रायवाचकमु* है, जो *नायकों* के अपने विजयनगर के संरक्षक राज्य से संबंध को उजागर करता है। यह संकेत करता है कि किस प्रकार यद्यपि *नायकों* ने विजयनगर के शासकों का अपने अधिराज के रूप में सम्मान करना जारी रखा, विजयनगर राज्य के पतन के साथ *नायक* शासकों ने अपने समकालीन पतनोन्मुख विजयनगर शासक के बजाय कृष्णदेवराय के गौरवशाली शासन की प्रशंसा को प्रमुखता दी। यह ग्रंथ नए उभरते सत्ता संबंधों का विश्लेषण करने के लिए ऐतिहासिक स्मृति का उपयोग करता है।

8.10 शब्दावली

अनाल्स

अनाल्स, लूसियाँ फ्रेड तथा मार्क ब्लॉक द्वारा स्थापित एक फ्रांसीसी पत्रिका थी, जिसके नाम के आधार पर इतिहास के *अनाल्स* स्कूल का नाम रखा गया था। *अनाल्स* इतिहासलेखन ने 'समग्र इतिहास' तथा अंतर-विषयक दृष्टिकोण (interdisciplinary approach) का समर्थन किया, इस प्रकार इतिहासलेखन के नए रूप को प्रोत्साहित किया। उन्होंने सूक्ष्म-अध्ययनों (micro-studies) पर बल दिया और मनोविज्ञानात्मक (मनोवृत्तियों के इतिहास) तथा सांस्कृतिक तत्वों को इसमें स्थान दिया

चंपू

चरित

एक साहित्यिक शैली जिसमें गद्य तथा पद्य का मिश्रण होता है

चरित एक प्रकार का वर्णन-परक लेखन है जिसमें किसी ऐतिहासिक या काल्पनिक राजा/नायक के जीवन/साहसिक कार्यों तथा उपलब्धियों पर ध्यान केंद्रित किया जाता था। मोटे तौर पर ये राजदरबार से संबंधित होते थे

इतिहास-पुराण

आख्यान, इतिहास, अतीत की घटनाओं तथा *पुराण* (पुरातन कथाओं) पर आधारित प्राचीन भारतीय ऐतिहासिक परम्परा (विस्तार से जानने के लिए प्रस्तुत पाठ्यक्रम की **इकाई 2** देखें)

दानस्तुति

शब्दशः, 'दान की प्रशंसा में'; इन मंत्रों की रचना दान ग्रहण करने वाले, जो मुख्यतः पुरोहित होते थे, द्वारा दानदाता की प्रशंसा में की गई थी

धर्मशास्त्र

प्राचीन संस्कृत ग्रंथ जो सदाचार तथा नीतिसम्मत सिद्धांतों (धर्म) पर विचार करते थे। सर्वप्रमुख धर्मशास्त्रीय ग्रंथ थे: *मनुस्मृति*, *याज्ञवल्क्यस्मृति* तथा *नारदस्मृति*

देसभाषा

क्षेत्रीय/स्थानीय भाषाएँ

करणम् गद्य शैली

करणम् शासन-कला के ग्रंथों को लिखते थे, इतिवृत्तांत लेखकों के विपरीत *करणम्* को इतिहास तथा दर्शन के लेखन में अधिक स्वायत्ता प्राप्त थी। वे अपने दृष्टिकोण में 'धर्मनिरपेक्ष' थे

कथा परम्परा

कथावाचन/इस प्रकार के अनुष्ठान का निष्पादन। इसमें अक्सर एक पुरोहित *कथावाचक/व्यास* धार्मिक ग्रंथों से कथाओं को सुनाता था, जिसके बाद इन पर टिप्पणी या प्रवचन दिए जाते थे

मार्गी-देसी शैली

**मेटाहिस्ट्री
(Metahistory)**

नायक

प्रबंध

प्रशस्ति

स्थानपति

तत आचार्य

वंशावली

शास्त्रीय तथा लोक/स्थानीय शैलियों का मिश्रण

इस संकल्पना की अभिव्यक्ति हेडेन व्हाइट ने अपनी कृति *मेटाहिस्ट्री: द हिस्टॉरिकल इमैजिनेशन इन नाइंटीन्थ सेंचुरी यूरोप* में की है। व्हाइट का तर्क है कि इतिहास को केवल तथ्यों तक सीमित नहीं होना चाहिए बल्कि किसी ऐतिहासिक ग्रंथ के गहन संरचनागत संदर्भों और अर्थों पर ध्यान देना आवश्यक है

मूल रूप से विजयनगर साम्राज्य के प्रांतों के सैन्य गवर्नर, बाद में विजयनगर शक्ति के पराभव के बाद, तालीकोटा युद्ध (1565) के पश्चात्, कई नायकों ने स्वयं को स्वतंत्र घोषित कर लिया

आलंकारिक लेखन, विवरणात्मक तथा आलंकारिक शैली में लिखा गया काव्य

अभिलेख रूप में लिखा गया प्रशंसापूर्ण काव्य; मुख्यतः राजदरबार से संबंधित। इन्हें मुख्यतः आलंकारिक शैली में लिखा गया था। सुविख्यात *प्रशस्तियों* में समुद्रगुप्त की *प्रयाग प्रशस्ति* है

विजयनगर दरबार में *नायकों* के प्रतिनिधि

राजगुरु; श्री वैष्णव मत के वेंकट तत आचार्य कृष्णदेवराय के राजगुरु थे

पीढ़ीगत अनुक्रम

8.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

- 1) देखें भाग 8.1
- 2) देखें भाग 8.1
- 3) देखें भाग 8.1
- 4) देखें भाग 8.2

बोध प्रश्न-2

- 1) देखें भाग 8.4
- 2) देखें भाग 8.4
- 3) देखें भाग 8.5
- 4) देखें उप-भाग 8.5.2
- 5) देखें उप-भाग 8.5.4

बोध प्रश्न-3

- 1) देखें भाग 8.6
- 2) देखें भाग 8.6
- 3) देखें भाग 8.6
- 4) देखें भाग 8.5, 8.6, 8.7, 8.8

8.12 संदर्भ ग्रंथ

जॉनसन, बारबरा, (1981) *रोलॉ बार्थ – क्रिटिकल ऐसेज* (शिकागो: यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस).
हंट, लिन, (संपा.) (1989) *द न्यू कल्चरल हिस्ट्री* (कैलिफोर्निया: कैलिफोर्निया यूनिवर्सिटी प्रेस).

- राव, वेलचेरु नारायण, (2017) *टेक्स्ट्स एंड ट्रेडिंज इन साउथ इंडिया* (न्यूयॉर्क: सूनी प्रेस).
- राव, वेलचेरु नारायण, डी. शुलमैन और एस. सुब्रह्मण्यम, (2003) *टेक्स्चर्ज ऑफ़ टाइम: राइटिंग हिस्ट्री इन साउथ इंडिया 1600-1800* (दिल्ली: पर्मानेंट ब्लैक).
- रेड्डी, श्रीनिवास, (2010) *गिवर ऑफ़ द वॉर्न गालेंड: कृष्णदेवरायास आमुक्तमाल्यद* (दिल्ली: इंडिया पेंग्विन क्लासिक्स).
- स्टोकर, वेलोवि, (2016) *सिटी ऑफ़ विकट्री* (कैलिफ़ोर्निया: कैलिफ़ोर्निया यूनिवर्सिटी प्रेस).
- थापर, रोमिला, (1986) 'सोसायटी एंड हिस्टॉरिकल कॉन्सिडरेशन्स: द इतिहास-पुराण ट्रेडिंज', एस. भट्टाचार्य तथा रोमिला थापर (संपा.), *सिचूएटिंग इंडियन हिस्ट्री* (दिल्ली: ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस), पृ. 353-83.
- थापर, रोमिला, (1995) 'हिस्टॉरिकल कॉन्सिडरेशन्स इन अर्ली इंडिया', थापर, आर., (संपा.) (2000) *कल्चरल पास्ट्स: एसेज़ इन अर्ली इंडियन हिस्ट्री* (दिल्ली: ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस), पृ. 155-172.
- टिलशेर, स्टेफ़ान, माइकेल मायर, रुथ वोडक, और ईवा वेडर, (संपा.) (2000) *मेथडज़ ऑफ़ टेक्स्ट्स एंड डिस्कोर्स अनालिसिस* (ब्रायन जेनर द्वारा अनुवादित) (लंदन: सेज़ पब्लिकेशन).
- वैगनर, फ़िलिप, (1993) *टाइडिंगज़ ऑफ़ द किंग: अ ट्रान्सलेशन एंड एथनोहिस्टॉरिकल अनालिसिस ऑफ़ द रायवाचकमु* (हवाई: यूनिवर्सिटी ऑफ़ हवाई प्रेस).
- व्हाइट, हेडेन, (1973) *मेटाहिस्ट्री – द हिस्टॉरिकल इमैजिनेशन इन नाइंटीन्थ सेंचरी यूरोप* (बाल्टीमोर: जॉन हॉफ़िन्स यूनिवर्सिटी प्रेस).
- व्हाइट, हेडेन, (1978) *ट्रापिक्स ऑफ़ डिस्कोर्स: एसेज़ इन कल्चरल क्रिटिसिज़म* (बाल्टीमोर: जॉन हॉफ़िन्स यूनिवर्सिटी प्रेस).

8.13 शैक्षणिक वीडियो

श्रीनिवास रेड्डी ऑन राय: कृष्णदेवराय ऑफ़ विजयनगर। एलएचआई बुक क्लब

<https://www.youtube.com/watch?v=AbKPSflUfSw>

राया: कृष्णदेवराय ऑफ़ विजयनगर

<https://www.youtube.com/watch?v=Q5ixaV6omIE>

कृष्णदेवराय ऑफ़ विजयनगर: ए ग्लोबल लीडर – टॉक बाय डॉ. श्रीनिवास रेड्डी

<https://www.youtube.com/watch?v=cyzHY8x-no>

